वार्षिक रु. १६०, मूल्य रु. १७

ISSN 2582-0656
9 772582 065005

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन
विवेकानन्द आश्रम
रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६० अंक १२
दिसम्बर २०२२

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६०

अंक १२

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

अग्रहायन, सम्वत् २०७९

दिसम्बर, २०२२

अनुक्रमणिका

* तुम्हें बहुत कार्य करना होगा : श्रीरामकृष्ण ५३४
* डुबकी लगाओ (भिक्षु विशुद्धपुत्र) ५३७
* श्रीमाँ सारदा देवी के पत्र ५४५
* श्रीमाँ सारदा का प्रबन्धन (स्वामी अलिप्तानन्द) ५४६
* (बच्चों का आंगन) विलक्षण प्रतिभा (श्रीमती मिताली सिंह) ५५०
* (युवा प्रांगण) आत्मविश्वास से आत्मविकास की ओर (स्वामी गुणदानन्द) ५५२
* जप-साधिका माँ सारदा (रीता घोष) ५५८
* जीवन का गीत है गीता (इन्दिरा मोहन) ५६३
* आये हैं तो जायेंगे राजा रंग फकीर (स्वामी सत्यरूपानन्द) ५६९
* वार्षिक अनुक्रमणिका – २०२२ ५७२
* (काव्य लहरी) पूजा लीन्ह माँसारदा (स्वामी रामतत्त्वानन्द) ५५१
* (काव्य लहरी) हे सारदा माँ ! भक्ति दो (रामकुमार गौड़) ५५१
* (कविता) सारदा अम्ब तुम्हें प्रणाम (ओमप्रकाश वर्मा) ५५७
* अम्बा मेरी सुधि लेना (आनन्द तिवारी पौराणिक) ५६५

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) ५३३
पुरखों की थाती ५३३
सम्पादकीय ५३५
प्रश्नोपनिषद् ५४१
आध्यात्मिक जिज्ञासा ५४३
श्रीरामकृष्ण-गीता ५४५
गीतातत्त्व-चिन्तन ५५५
सारगाछी की स्मृतियाँ ५६१
रामराज्य का स्वरूप ५६६
साधुओं के पावन प्रसंग ५७०
समाचार और सूचनाएँ ५७१

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : **०९८२७१ ९७५३५** (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,**
वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९
(समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक)
रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति १७/–	१६०/-	८००/-	१६००/-
विदेशों में (हवाई डाक से)	५० यू.एस. डॉलर	२५० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिये	२००/–	१०००/–	

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : रायपुर (छत्तीसगढ़)
अकाउण्ट नम्बर : 1 3 8 5 1 1 6 1 2 4
IFSC : CBIN0280804

विवेक-ज्योति कोष/स्थायी कोष

दान दाता	दान-राशि
श्री रविशंकर नेमा, आधारताल, जबलपुर (म.प्र.)	२१,०००/-
श्री अनुराग प्रसाद, कौशम्बी, गाजियाबाद (उ.प्र.)	६,४००/-

* कृपया सदस्यता राशि जमा करने के बाद इसकी सूचना हमें तुरन्त **फोन, मोबाईल, एस.एम.एस., व्हाट्सएप, ई-मेल** अथवा **स्कैन द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड नं.** के साथ भेजें ।
* विवेक-ज्योति पत्रिका के सदस्या किसी भी माह से बन सकते हैं ।
* पत्रिका को निरन्तर चालू रखने हेतु अपनी सदस्यता की अवधि पूर्ण होने के पूर्व ही नवीनीकरण करा लें ।
* विवेक-ज्योति कार्यालय से प्रतिमाह सभी सदस्यों को एक साथ पत्रिका प्रेषित की जाती है । डाक की अनियमियता के कारण कई बार पत्रिका सदस्यों को नहीं मिलती है, अत: पत्रिका प्राप्त न होने पर अपने समीप के डाक विभाग से सम्पर्क एवं शिकायत करें । इससे कई सदस्यों को पत्रिका मिलने लगी है । पत्रिका न मिलने की शिकायत माह के अंत में ही करें । अंक उपलब्ध होने पर ही पुन: प्रेषित किया जायेगा ।
* सदस्यता, एजेन्सी, विज्ञापन एवं अन्य विषयों की जानकारी के लिए 'व्यस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय' को लिखें ।

दिसम्बर माह के जयन्ती और त्यौहार

०१ स्वामी प्रेमानन्द
१५ श्रीमाँ सारदा देवी
१९ स्वामी शिवानन्द
२४ क्रिसमस ईव
२८ स्वामी सारदानन्द
३,१९ एकादशी

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन नि:शुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से **अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें**

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

श्रीमाँ सारदा देवी की यह मूर्ति रामकृष्ण मिशन, कसुन्दीया, हावड़ा, पश्चिम बंगाल की है। इस आश्रम की स्थापना श्रीरामकृष्ण देव के अन्तरंग पार्षद श्रीमत् स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने १९१६ ई. में की थी। इस आश्रम का विलय रामकृष्ण मठ एवं मिशन, बेलूड़ मठ में १० अगस्त, २०१९ को हुआ।

रामकृष्ण मिशन, नवद्वीप

रामकृष्ण मिशन की एक शाखा, पो. बेलूड़ मठ, जिला - हावड़ा, प.बं.-711202
पश्चिम मायापुर, पो. नवद्वीप, जिला - नदिया, पश्चिम बंगाल - 741302
Email:nabadwip@rkmm.org. Phone : (03472-295319)

निवेदन : स्वामी आत्मस्थानन्द भवन निर्माण हेतु

रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ द्वारा 2021 में श्रीश्रीरामकृष्ण सेवा समिति को अपने संरक्षण/अधिकार में लिया गया । प्रेमावतार, संकीर्तन के प्रवर्तक - श्री चैतन्य महाप्रभु की जन्मस्थली नवद्वीप धाम में पवित्र गंगातट पर स्थित इस सेवाश्रम की स्थापना सन् 1956 में हुई ।

नवद्वीप, आश्रम द्वारा निःशुल्क कोचिंग सेन्टर की सेवा प्रदान की जाती है, जिससे 105 गरीब छात्रों को निःशुल्क शिक्षा एवं दोपहर में पाठ्यक्रमेतर, गतिविधियों का लाभ प्राप्त होता है। इसी भवन परिसर में गदाधर अभ्युदय प्रकल्प की एक शाखा संचालित की जाती है, जिसका लक्ष्य विद्यार्थियों का सर्वांगीण, शारीरिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक विकास है, इस सेवा से प्रतिदिन प्रातःकाल 55 वंचित छात्र लाभान्वित होते हैं।

वर्तमान में, निःशुल्क कोचिंग केन्द्र भवन जर्जर स्थिति में है एवं उपयोग हेतु उपयुक्त नहीं है । इसके अतिरिक्त एक सेवार्थ चिकित्सालय भी है, जहाँ 3 प्रख्यात चिकित्सकों द्वारा प्रत्येक सप्ताह 100 रोगियों को चिकित्सकीय सेवायें एवं उपलब्ध दवाईयाँ निःशुल्क प्रदान की जाती है। वर्तमान में स्थान अभाव के कारण इस सेवार्थ चिकित्सालय का संचालन छोटे से अतिथि भवन से किया जा रहा है । हमलोग आश्रम से संलग्न रिक्तभूमि पर बहु प्रयोजनीय भवन के निर्माण हेतु संकल्पित है, वहाँ से निःशुल्क कोचिंग केन्द्र, कम्प्यूटर सेवार्थ चिकित्सालय, निःशुल्क प्रशिक्षण केन्द्र, निःशुल्क रोजगार उन्मुख प्रशिक्षण केन्द्र, माँ सारदा पुस्तकालय एवं विद्यार्थी भवन का संचालन किया जा सके।

दिसम्बर 2005 में परम आदरणीय श्रीमत् स्वामी आत्मस्थानन्द जी महाराज के श्रीधाम नवद्वीप आगमन की गौरवशाली स्मृति में, नवीन बहु प्रयोजनीय भवन का नाम स्वामी आत्मस्थानन्द भवन रखा गया है। महाराज ने नवद्वीप आश्रम में एक सप्ताह से अधिक रुकने की कृपा की थी एवं मंगलकामना की थी कि रिक्तभूमि का उपयोग मानव सेवा हेतु हो सके।

महाराज की मंगल कामना के अनुसार, 13 नवम्बर, 2021 को श्रीश्री जगद्धात्री पूजा के पावन अवसर पर 8.75 कट्ठा भूमि पर दो मंजिला भवन निर्माण के कार्य का शुभारम्भ हुआ एवं उस पर छत ढलाई का कार्य अभी सम्पन्न हुआ है। शेष कार्य की अनुमानित लागत मात्र 53 लाख रुपये हैं, जिसमें से 11 लाख भूतल एवं 42 लाख रुपये प्रथम तल के निर्माण कार्य को पूर्ण करने हेतु उपयोग होंगे ।

सभी भक्तों, दानदाताओं, संरक्षकों एवं शुभचिन्तकों से हार्दिक निवेदन है कि इस मंगल कार्य में अपना बहुमूल्य सहयोग प्रदान करें। दानराशि स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया के बचत खाता, **SBI A/C 40365681338, IFSc - SBIN 0002090**, रामकृष्ण मिशन के नाम से भेजी जा सकती है।

रामकृष्ण मिशन को प्रदत्त सभी दान आयकर अधिनियम 1961, धारा 80-जी के अन्तर्गत आयकर मुक्त है।

श्रीचैतन्य महाप्रभु , ठाकुर श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा एवं स्वामीजी का पावन स्नेहाशीष एवं कृपा हम सभी को सदैव प्राप्त होती रहे।

दिनांक 29-5-2022
श्रीश्री फलहारिणी काली पूजा

प्रभु की सेवा में आपका
स्वामी अमरेश्वरानन्द
सचिव
रामकृष्ण मिशन, नवद्वीप
मो. 09433577985

वर्तमान में भवन निर्माण का चित्र

प्रस्तावित भवन स्वामी आत्मस्थानन्द भवन का चित्र

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !

आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।

इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी

भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर'!

सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए

सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए

सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए

घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त

समझदारी की सोच!

३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!

आजीवन सेवा — लाखों संतुष्ट ग्राहक — विस्तृत डीलर नेटवर्क

Sudarshan Saur®

www.sudarshansaur.com | Toll Free 1800 233 4545 | E-mail: office@sudarshansaur.com

। । आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च । ।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६० **दिसम्बर २०२२** **अंक १२**

श्रीश्रीसारदादेवीस्तोत्रम्

जयतु जयतु देवी ध्यानगम्भीरमूर्ति-
र्जयतु जयतु देवी साधकाभीष्टदात्री।
जयतु जयतु देवो रामकृष्णस्य शक्ति-
र्जयतु जयतु देवी शारदा विश्वधात्री।।

– ध्यान गम्भीर मूर्तिधारिणी और साधकों को उनका अभीष्ट देनेवाली देवी की जय हो, जय हो ! श्रीरामकृष्ण परमहंस देव की शक्तिरूपिणी माँ शारदा देवी की जय हो, जय हो !

वैकुण्ठे विष्णुः पार्श्वे विहरति कमला विश्वकल्याणदात्री।
कैलाशे शम्भुवासे विहरति गिरिजा लोकरक्षा-विधात्री।।
जाह्नव्यां पुण्यतीर्थे मणिमय-भवने कालिका-पादपद्मे।
राजते ध्यानमग्नौ मम हृदयनिधौ शारदा-रामकृष्णौ।।

– जिस प्रकार वैकुण्ठ में नारायण के पार्श्व में विश्वकल्याणदायिनी लक्ष्मी विराजमान हैं, कैलास पर्वत पर महादेवजी के वाम भाग में लोकरक्षाकारिणी पार्वतीजी विराजमान हैं, उसी प्रकार जाह्नवी तट पर पुण्य तीर्थ में मणिमय मन्दिर में कालिका देवी के चरणकमलों में ध्यानमग्न होकर मेरे हृदयनिधि सारदा और रामकृष्ण विराजमान हैं।

पुरखों की थाती

जनिता चोपनेता च यस्तु विद्यां प्रयच्छति।
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः।।७८१।।

– पिता पाँच प्रकार के होते हैं – जन्म देनेवाले, उपनयन संस्कार करानेवाले, विद्या देनेवाले, अन्न प्रदान करनेवाले और भय से रक्षा करनेवाले।

जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके।
ज्वालमालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत।।७८२।।
(पुराण)

– भगवान् विष्णु जल में हैं, स्थल में हैं, पर्वत की चोटी पर हैं, अग्नि की ज्वाला में हैं – इस प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् ही विष्णुमय है।

भूचराः खेचराश्चामी यावन्तो जीवजन्तवः।
वृक्षगुल्मलतावल्लीतृणाद्या वारि पर्वताः।
सर्वं ब्रह्म विजानीयात् सर्वं पश्यति चात्मनि।।७८३।।
(घेरण्ड)

– भूमि पर चलनेवालों से लेकर आकाश में विचरने वाले जीव-जन्तु, पेड़, झाड़ी, लताएँ, तिनके, झरने और पर्वत – इन सभी को ब्रह्म-स्वरूप जानते हुए सभी को अपनी आत्मा में देखना चाहिए।

तुम्हें बहुत कार्य करना होगा : श्रीरामकृष्ण देव

श्रीरामकृष्ण कामारपुकुर में जब ग्रामीण स्त्रियों को उपदेश देते थे, तब श्रीमाँ वह सब सुनते-सुनते बीच-बीच में सोने लगतीं। अन्य स्त्रियाँ उन्हें ठेलकर उठा देतीं और कहतीं, ''ऐसी सुन्दर बातें न सुनकर सो रही है !'' श्रीरामकृष्ण कहते, ''नहीं जी, नहीं, मत उठाओ। वह क्या शौक से सो रही है? इन सब बातों को सुनने पर वह यहाँ नहीं रहेगी, सीधे भाग जाएगी।''

वह (श्रीमाँ) सारदा है, सरस्वती है, ज्ञान देने के लिए आई है। सौन्दर्य रहने पर उसे अशुद्ध भाव से देखने के कारण कहीं लोगों का अमंगल न हो जाए, इसी से इस बार रूप छिपाकर आई है।

वह ज्ञानदायिनी है, महाबुद्धिमती है। वह क्या ऐसी-वैसी है? वह मेरी शक्ति है !

अरे उसका नाम सारदा है, वह सरस्वती है; इसी से वह सज-धजकर रहना चाहती है।

श्रीरामकृष्ण श्रीमाँ की ओर एकटकी लगा देखने लगे। यह देख श्रीमाँ ने कहा, ''क्या कुछ कहना चाहते हो? कहो न।'' श्रीरामकृष्ण ने शिकायत के स्वर में कहा, ''तुम क्या कुछ भी नहीं करोगी (अपनी ओर संकेत करते हुए) यही सब करेगा?'' श्रीमाँ ने अपनी असमर्थता की बात सोचते हुए कहा, ''मैं तो औरत हूँ, मैं क्या कर सकती हूँ?'' श्रीरामकृष्ण ने उसी क्षण उत्तर दिया, ''नहीं, नहीं, तुम्हें बहुत कुछ करना होगा।''

श्रीमाँ ने पुकारा, ''भोजन का समय हो गया है, उठो।'' श्रीरामकृष्ण मानो किसी दूर प्रदेश से आकर भाव के नशे में श्रीमाँ की ओर दृष्टिपात करते हुए बोले, ''देखो, कलकते के लोग मानो अँधेरे में कीड़ों की तरह कुलबुला रहे हैं। तुम उनको देखना।'' श्रीमाँ ने करुण स्वर में कहा, ''मैं तो स्त्री हूँ, यह कैसे होगा?'' श्रीरामकृष्ण अपने शरीर की ओर इंगित कर अपने ही भाव में कहते गये, ''आखिर इसने क्या किया है? तुम्हें इससे बहुत अधिक करना होगा।''

श्रीरामकृष्ण देव ने गौरी-माँ से विनोद में पूछा, ''बोल तो, गौरदासी, तु किसे अधिक चाहती है?'' कौतुकप्रिया गौरी-माँ ने सीधे उत्तर न दे, उस भाव की पूर्ति के लिए सुमधुर स्वर में एक गाना गाया, जिसका आशय इस प्रकार था, ''हे त्रिभंग-मूर्ति वंशीधर कृष्ण, तुम राधिकाजी से बड़े नहीं हो, क्योंकि विपत्ति पड़ने पर लोग तुम्हें 'मधुसूदन' कहकर पुकारते हैं, पर जब तुम्हारे ऊपर विपत्ति पड़ती है, तब तुम वंशी से बुलाते है, 'मेरी किशोरी राधे'। श्रीमाँ ने लज्जित हो गौरी-माँ का हाथ पकड़ लिया। श्रीरामकृष्ण अपनी हार मान कर हँसते-हँसते चले गए।

कालीपद घोष की पत्नी को श्रीरामकृष्ण देव ने कहा था, ''वहाँ (नौबतखाना में) एक महिला (श्रीमाँ सारदा) हैं, उनसे यदि तुम सब खोलकर बताओ, तो वे ठीक दवा देंगी। वे ऐसी मन्त्रोषधि जानती हैं। इस सम्बन्ध में उनकी शक्ति मेरी शक्ति से अधिक है।''

श्रीरामकृष्ण ने सारदाप्रसन्न (स्वामी त्रिगुणातीतानन्द) को कहा था, ''राधा की माया अनन्त है, उसे कहा नहीं जा सकता। राम और कृष्ण करोड़ों की संख्या में उसी से उत्पन्न होते हैं, उसी में रहते हैं और उसी में विलीन हो जाते हैं।''

श्रीरामकृष्ण हँसी में कहते, ''वह (श्रीमाँ सारदा) राख से ढँकी बिल्ली है।'' जैसे राख से ढँकी बिल्ली शीघ्र लोगों की दृष्टि में नहीं आती, वैसे ही श्रीमाँ साधारण मनुष्य की समझ में नहीं आतीं।

सम्पादकीय

करुणारूपिणी जय माँ !

आज प्रात:काल मंदिर से एक समवेत मधुर स्वर सुनाई पड़ रहा था – 'जय जय जननी जय श्रीसारदामणि करुणारूपिणी जय माँ।' हमारे छात्रावास के बच्चे इस भजन को गा रहे थे। ऐसे सैकड़ों बार इस मधुर संगीत-लहरी का मैंने श्रवण किया है, किन्तु आज कुछ भिन्न प्रतीत हो रहा था। माँ के करुण-प्रसंगों का स्मरण होने से मन में माँ के प्रति कृतज्ञता की उद्भावना होने लगी। शास्त्रों में सत्संग, कीर्तन, भजन को साधना का महत्त्वपूर्ण अंग बताया गया है। यह भगवान से तादात्म्य स्थापित करने का सरल साधन है। कैसे एक भजन जगदम्बा से योग स्थापित करने में सहायक बन जाता है, कैसे एक भजन ईश्वर-चिन्तन में सहयोगी हो जाता है, इसका किंचित् बोध होने लगा। वास्तविकता यह है कि जीव ईश्वर की मातृसुलभ वात्सल्य के बिना संजीवित नहीं रह सकता। माँ की करुणाविगलित स्नेहांक के बिना सन्तान सुरक्षित नहीं रह सकती। माँ की करुणा सन्तान के पग-पग पर प्रत्येक परिस्थिति में परिलक्षित होती रहती है, लेकिन वह अपनी विमूढ़तावश उसका अनुभव न कर उनके प्रति कृतज्ञ नहीं होता।

शताक्षी माता जीवों के कष्ट को देखकर करुणार्द्र हो गयीं और उनके शरीर के सैकड़ों नेत्रों से अश्रु विसर्जित होने लगे। माँ सीता ने पूर्ण निर्दोष होते हुये भी दो बार वनवास स्वीकार किया, किन्तु एक बार भी उनके मुख से वनवास में निमित्त बने लोगों के प्रति कटु शब्द नहीं निकले। लंका में उन्हें सतानेवाली राक्षसियों तक को उन्होंने क्षमा किया, इसके मूल में उनकी उनलोगों के प्रति करुणा ही थी।

करुणामूर्ति श्रीमाँ सारदा की अपनी सन्तानों के प्रति करुणा भी बोधगया में बौद्ध विहार मठ को देखकर अभिव्यक्त हुई। जब वे १८९० में तीर्थाटन के दौरान बोधगया गई थीं और वहाँ उन्होंने बौद्ध विहारों के ऐश्वर्य को देखा और अपनी त्यागी सन्तानों के अन्न-वस्त्र के कष्ट को देखा, तो उनका मातृ-मन द्रवित हो गया। श्रीमाँ सारदा की जीवनी के लेखक स्वामी गम्भीरानन्द जी महाराज लिखते हैं – ''सन् १८९० ई. के मार्च में श्रीमाँ बोधगया गयी थीं। उस दिन एक ओर वहाँ के मठ का अतुल ऐश्वर्य देख और दूसरी ओर अपने त्यागी पुत्रों के लिये स्थायी आश्रय का अभाव, अन्न-वस्त्र का अवर्णनीय कष्ट तथा साथ ही मठ के संचालन में अत्यन्त दैहिक कष्ट आदि देख संघ-जननी विचलित हो उठीं। संघ को सुव्यवस्थित रूप से देखने के लिये उनके मन में एक करुण प्रार्थना जाग उठी। बाद में उन्होंने कहा था – ''अहा ! इसके लिये ठाकुर के सामने कितना रोई हूँ ! कितनी प्रार्थना की हूँ ! तभी तो आज उनकी कृपा से ये मठ-वठ जो कुछ है। ठाकुर के देह-त्याग के बाद लड़के संसार त्यागकर कुछ दिन एक स्थान पर निवास किये। इसके बाद सभी स्वाधीन रूप से एक-एक कर इधर-उधर घूमते रहे। उस समय मुझे बड़ा दुख हुआ। ठाकुर के पास प्रार्थना करने लगी – 'ठाकुर, तुम आए, इन कुछ व्यक्तियों के साथ लीला की और आनन्द करके चले गए और बस, सब समाप्त हो गया? तो इतना कष्ट करके आने की क्या आवश्यकता थी? मैंने काशी-वृन्दावन में देखा है, अनेक साधु भीख माँगते और इधर-उधर भटकते-फिरते हैं। ऐसे साधुओं की तो कमी नहीं है। तुम्हारे नाम पर अपना सब कुछ त्यागकर मेरे बच्चे थोड़े से अन्न के लिए भटकते रहेंगे, यह मुझसे देखा नहीं जाएगा। मेरी तुमसे यही प्रार्थना है कि तुम्हारे नाम पर जो निकलेंगे, उन्हें साधारण खाने-पहनने का अभाव न हो। वे सभी तुम्हें और तुम्हारे उपदेशों तथा भावों को लेकर एक साथ रहेंगे और सांसारिक दुखों से जर्जरित मनुष्य उनके पास आकर तुम्हारी बातें सुनकर शान्ति पायेंगे। इसीलिए तो तुम्हारा यहाँ आना हुआ है। उन्हें इधर-उधर भटकते देख मेरा हृदय व्याकुल हो उठता है।' इसके बाद नरेन ने धीरे-धीरे यह सब किया।''[१]

इस प्रकार करुणामयी माँ के करुणोद्रेक से रामकृष्ण संघ की स्थापना हुई। रामकृष्ण संघ सम्पूर्ण विश्व के लिये है, सम्पूर्ण मानवता के लिये है। श्रीमाँ की इस स्नेह-सुरसरि की धारा में सम्पूर्ण विश्ववासियों का मंगल-विधान अन्तर्निहित था।

करुणामयी माँ के पास सन्तप्त कितने नर-नारी, बच्चे-बच्चियाँ आते थे और माँ उन्हें बड़े स्नेह और वात्सल्य से धैर्य प्रदान करती थीं, सान्त्वना प्रदान कर उन्हें हर्षित कर देती थीं, माँ की अभय स्नेहमयी वाणी से उनके दुखों का नाश हो जाता था और वे लोग प्रसन्नमुखमंडल से अपने घर चले जाते थे। शंकराचार्यजी ने देव्यापराधस्तोत्र में कहा है – **कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति** – पुत्र कुपुत्र हो जाता है, लेकिन माता कभी कुमाता नहीं होती। पुत्र से त्रुटियाँ हो सकती हैं, लेकिन माता अपने स्नेह से कभी भी पुत्र को वंचित नहीं करती, उसका सदा मंगल ही चाहती है। श्रीमाँ के जीवन के ऐसे कई उदाहरण हैं, जिसे सबके त्यागने पर उन्होंने करुणावश स्वयं उसकी पुत्रवत् स्नेह देकर रक्षा की है।

एक बार स्वामी व्रजेश्वरानन्द जी तपस्या करने जाने के लिये माँ की अनुमति लेने कलकत्ता गये। माँ को प्रणाम कर उन्होंने अपना मनोभाव बताया। माँ ने पूछा, कहाँ जाओगे और पास में रुपया-पैसा है या नहीं? उन्होंने कहा कि हाथ खाली है, वे ग्रांड ट्रंक रोड़ पकड़कर पैदल काशी जायेंगे। माँ ने कहा, ''कार्तिक का महीना है। लोग कहते हैं कि इस समय यम के दरवाजे चारों ओर खुले रहते हैं। मैं माँ हूँ, कैसे कहूँ, बेटा कि तुम जाओ? फिर कहते हो कि तुम्हारा हाथ खाली है। भूख लगने पर भला कौन खाने को देगा, बेटा?''[२] इसके बाद वे नहीं गये। इसमें मातृसुलभ करुणा का उद्रेक स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

एक बार कुछ साधु संघ छोड़कर जा रहे थे। जयरामवाटी में माँ से मिलने पर माँ ने जाने से मना भी किया। लेकिन उग्र तपस्या करने की इच्छा बताकर वे काशी चले गये। स्वामी शिवानन्द जी ने काशी अद्वैत आश्रम में पत्र लिखकर इन लोगों को रहने से मना कर दिया। उनमें से एक भोलानाथ ने घबराकर श्रीमाँ की शरण ली और अद्वैत आश्रम में रहने की अनुमति माँगी। यद्यपि यह अपराध था, लेकिन श्रीमाँ ने करुणावश क्षमा करते हुये भोलानाथ को लिखा – ''मैंने तुम्हारी बात चन्द्र को लिख दी है और तुम्हें भी लिख रही हूँ कि जब काशी पहुँच गये हो, तब ठाकुर के आश्रम में रहकर आजीवन चन्द्र की तथा साधुओं की सेवा यदि कर सको, तो सब प्रकार से कल्याण होगा।'' श्रीमाँ के निर्देशानुसार भोलानाथ ने आजीवन वहीं सेवा की।[३] अपराधी पुत्रों के प्रति भी उनके कल्याण की सतत चिन्ता थी माँ को, जिसके मूल में अनन्त करुणामयी का करुणामय स्वभाव ही था।

ऐसे ही जब ब्रह्मचारी नगेन ने कुछ भूल के कारण स्वामी शिवानन्द जी को बिना बताये जयरामवाटी जाकर माँ की शरण ली, तब श्रीमाँ ने शरणागत सन्तान की सब प्रकार से रक्षा की और उसे पुन: शिवानन्दजी को पत्र लिखकर मठ में रखवाया।

श्रीमाँ ने कितने दीर्घ व्याधि पीड़ित लोगों की व्याधि को दूर कर उन्हें कष्ट मुक्त किया। इसमें एक घटना उल्लेखनीय है। क्षिरोदबाला राय हाथ के घाव से १२ वर्षों से पीड़ित थीं। किसी प्रकार भी वह घाव ठीक नहीं हो रहा था। हठात् एक दिन माँ को जानकारी हुई। उन्होंने ठाकुर का चरणामृत लगाने को कहा। चरणामृत लगाने के बाद वह घाव सदा के लिये ठीक हो गया।[४]

एक बार एक छोटे बच्चे को श्रीमाँ ने उसके आग्रह पर दीक्षा भी दी थी। माँ ने कहा था, कहो तो, कौन भगवान के लिये रोता है, वह उस दिन कितना रो रहा था !

सेवक ने देखा कि माँ रात में सोती कम हैं, जब बुलाओ, तो एक ही पुकार में उत्तर दे देती हैं। तब एक दिन सेवक ने पूछा – माँ आप सोयी नहीं हैं या नींद ही नहीं आती है? माँ ने उत्तर दिया – ''क्या करूँ बेटा, लड़के सब व्याकुल होकर मुझे पकड़ लेते हैं, आग्रह कर उस समय दीक्षा तो ले जाते हैं, पर कहाँ, कोई नियम से, नियम से ही क्यों, कोई तो कुछ भी नहीं करते। तो भी जब उनका भार ले लिया है, तब मुझे उन्हें देखना ही पड़ेगा। इसलिये जप करती रहती हूँ और ठाकुर से उनके लिये प्रार्थना करती हूँ – ''हे ठाकुर ! उन्हें चेतना दो, मुक्ति दो, उनके इहकाल और परकाल के बारे में तुम्हीं देखते रहो। इस संसार में बड़ा दुख है। फिर उन्हें न आना पड़े।'' यहाँ जगत-जननी जीव-दुख से कातर हो अपनी निष्कारण करुणा कटाक्ष से जीवों के कल्याणार्थ वृद्ध शरीर में भी रात में जप और प्रार्थना करती हैं।[५]

करुणामयी की करुणा भी अनन्त रूपों में अभिव्यक्त हुई थी, तभी तो स्वामी चण्डिकानन्द जी महाराज ने लिखा था, 'जय जय जननी जय श्रीसारदामणि करुणारूपिणी जय माँ।' श्रीमाँ की करुणा हम सब पर वर्षित हो। जय माँ ! ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. श्रीमाँ सारदा देवी, पृष्ठ २५८ **२.** वही, पृ. २६४ **३.** वही, पृ.२७७ **४.** माँ की बातें, पृ. ४३३ **५.** वही, पृ.३०५

डुबकी लगाओ

भिक्षु विशुद्धपुत्र

अनुवाद – अवधेश प्रधान

पूर्व प्राध्यापक बी.एच.यू., वाराणसी

(गतांक से आगे)

२० जनवरी, १९५६

महाराज के प्रेम से दिमाग खराब न हो जाये

रात को पूजनीय महाराज जी के पास गया था। जाते ही उन्होंने प्रश्न किया, ''क्यों रे, तेरी क्या खबर है?'' मैंने प्रश्न का सीधा कोई उत्तर न देकर कहा, ''महाराज, आज सबेरे पाठ के समय उपेन महाराज ने बातों के क्रम में कहा, ''देखो बेटा, तू महाराज के पास इतना जाता है, उनका इतना स्नेह पाता है, देखना, कहीं खराब न हो। एक लता एक बड़े पेड़ का सहारा लेकर ऊपर चढ़ती है। जितना भी आँधी-अंधड़ आता है, उस बड़े पेड़ के ऊपर से चला जाता है और लता समझती है कि मैं अपने पैर पर खड़ी हूँ। लेकिन जब पेड़ नहीं रहता, तब लता समझ पाती है।'' महाराज ने सब सुनकर कहा, ''ठीक कहा है।''

(मेरे संघजीवन के आरम्भिक पाँच वर्ष पूजनीय उपेन महाराज (स्वामी विमुक्तानन्द जी के पास व्यतीत हुये हैं। कहा जाये, तो साधु जीवन का क ख ग उन्हीं के पास से पढ़ा है। वे हम लोगों को अत्यन्त स्नेह की दृष्टि से देखते थे और हमारे जीवन को सर्वांग सुंदर बनाने के लिये हमेशा प्रयत्न करते थे। वे प्रतिदिन हमलोगों को सबेरे शास्त्रादि पढ़ाते थे। प्रत्येक रविवार को सबेरे हमलोगों को लेकर भजन की गोष्ठी जमाते। फिर कभी-कभी बागबाजार श्रीमाँ का निवास (मायेरबाड़ी) उद्बोधन या दक्षिणेश्वर ले जाते। मुझको पूजनीय विशुद्धानन्द जी महाराज की स्नेह-छाया में आश्रय प्राप्त हुआ है, यह देखकर वे मेरे भविष्य के सम्बन्ध में कुछ चिन्तित थे। क्योंकि उन लोगों ने कई बार देखा कि महापुरुषों की कृपा ने उन लोगों को नम्र न बनाकर अहंकारी बना दिया है और इस प्रकार कई लोगों का जीवन नष्ट होते भी देखा है। इसीलिए वे प्राय: मुझको सावधान कर देते, ''देखना, महाराज का प्रेम पाकर दिमाग खराब न हो जाये।'')

बाद में किसी अन्य प्रसंग में महाराज ने कहा, ''बड़े-बड़े कामों से किसी का मूल्यांकन नहीं करना। वाहवाही पाकर सभी बड़े काम कर सकते हैं।''

मैंने फिर उपेन महाराज का प्रसंग उठाकर कहा, उन्होंने कहा, 'गुरु के आदेश और संघगुरु के आदेश में अन्त में गुरु के आदेश का ही पालन करना।'' मेरी बात सुनकर महाराज ने कहा,''आज तुम लोगों की उम्र का एक लड़का अपनी मौसी को लेकर आया था। कटिहार में दीक्षा हुई है। आते ही मैंने प्रश्न किया, ठाकुर को प्रणाम किया है? इस पर मौसी ने कहा, नहीं किया। कहा है, पहले गुरु को प्रणाम करके तब ठाकुर को करना। बात समाप्त होने के बाद महाराज ने मुझसे पूछा, ''गुरु ने क्रोध किया या इष्ट ने क्रोध किया?'' मैंने उत्तर दिया, ''गुरु और इष्ट एक हैं। वहाँ और कौन क्रोध करेगा?''

बाद में मैंने उपेन महाराज की एक और बात महाराज को बतलाई। उन्होंने कहा था, मन किस तरह धोखा देता है। मान लो, किसी को कोई काम दिया गया है, लेकिन उसको पसन्द नहीं है। वह इस तरह बोलेगा, ''मैं तपस्या करने जाऊँगा।'' लेकिन अगले ही क्षण पसंद का काम मिलते ही कहेगा, ''आप जो आदेश करें।'' मेरी बात सुनकर महाराज ने कहा, ''भगवान के सम्बन्ध में भी ऐसा ही होता है। यदि वे सभी इच्छाएँ पूर्ण कर दें, तो बहुत अच्छा ! दस बार प्रणाम करेगा और कहेगा, प्रभु की करुणा अपार है ! लेकिन यदि कोई वासना पूर्ण न करें, तो फिर कहेगा, जाओ प्रभु, तुम्हारी कोई जरूरत नहीं है।''

२९ जनवरी, १९५६, तमोगुण का लक्षण

आज वार्तालाप के प्रसंग में पूजनीय महाराज ने कहा, ''हम लोग क्या करते थे, जानते हो? शाम से लेकर खाने का घंटा बजने तक बैठते थे।'' यह सुनकर मैं बोला, ''माथा जो टन-टन करता है !'' इस पर महाराज ने थोड़ा उत्तेजित

होकर कहा, ''टन-टन करे न? करके तो देख ! वह सब मन की बहानेबाजी है ! वह सब तमोगुण का लक्षण है।''

३१ जनवरी, १९५६

मैं स्वयं महाराज से कभी कोई प्रश्न नहीं पूछता, इसीलिए उन्होंने आज थोड़ा तिरस्कार के स्वर में कहा, ''तुम लोगों के मन में कोई प्रश्न नहीं उठता? या वहाँ उपेन (स्वामी विमुक्तानन्द) रहता है, उससे सब पूछ लेते हो? या सब समझ लेते हो?'' बाद में बोले, ''पुस्तक पढ़कर जहाँ नहीं समझ में आएगा, उपेन से पूछ लेना।''

१ फरवरी, १९५६, मन कितना बैठता है

आज दोपहर में पूजनीय महाराज जी के पास गया था। उनसे कहा, ''महाराज, आजकल दिन में तीन घंटे बैठता हूँ। क्या समय और बढ़ाऊँ?'' उत्तर में महाराज ने कहा, प्रारम्भ में तीन घंटा पर्याप्त है। एक वर्ष तक इसी तरह चलने दो। केवल बैठने से तो नहीं होगा। ऋषिकेश में तो अनेक हैं, जो बारह घंटे बैठते हैं। असली बात है, मन कितना बैठता है।''

२७ फरवरी, १९५६, योग समन्वय

शाम को महाराज जी के पास गया था। आज सबेरे पूजनीय विमुक्तानन्द जी मठ की नियमावली पढ़ा रहे थे। उसमें स्वामीजी ने योग-समन्वय की बात कही है। इसीलिए पूजनीय महाराज से इस विषय में प्रश्न किया, ''नियमावली में स्वामीजी ने जो कर्म, भक्ति, ज्ञान और योग के समन्वय की बात कही है, उसका तात्पर्य क्या है?'' उत्तर में महाराज ने कहा, ''ज्ञान माने क्या? श्रीठाकुर एक और अद्वितीय हैं, यह विश्वास होना। यह हुई परोक्ष अनुभूति, जैसे एक आदमी ने आकर कहा, विलायत में राजा है। जप-ध्यान के योग द्वारा भक्ति का अनुभव हो रहा है। फिर कर्म में भी वही हैं। उन्हीं का काम कर रहा हूँ। यही तो समन्वय है। गीता में भी यही है। भगवान ने अर्जुन को कर्म का, गोपिकाओं को भक्ति का और उद्धव को ज्ञान का उपदेश दिया।'' यह बता महाराज ने प्रश्न किया, ''उपेन ने क्या बताया?'' मैंने कहा, ''उन्होंने बताया, हमलोगों को सभी विषयों में पास करना होगा, लेकिन 'ऑनर्स' करना होगा कर्म में। क्योंकि स्वामीजी ने निष्काम कर्म के ऊपर अधिक जोर दिया है। मेरी बात सुनकर महाराज ने कहा, ''ऑनर्स करना होगा 'अनुभूति' में। सभी विषयों में 'पास' करने पर ही 'ऑनर्स' मिलेगा। जो साधना में इन चारों मार्गों का समन्वय कर पाएगा, वह सिद्धि में भी समन्वय प्राप्त करेगा। क्योंकि स्वामीजी ने कहा है – टेक केयर ऑफ दि मीन्स ऐन्ड दि एन्ड विल टेक केयर ऑफ इटसेल्फ – मार्ग पर दृष्टि रखो, फल ठीक ही प्राप्त होगा।''

५ मार्च, १९५६

आज ढाका जाने के लिए पूजनीय महाराज ने कलकत्ता प्रस्थान किया, इंस्टिट्यूट ऑफ कल्चर में (१११ नं. रसर रोड) ठहरेंगे। कल अपराह्न में तीन बजे ढाका के लिये हवाई जहाज है।

२० मई, १९५६

आज अपराह्न में नॉर्थबंगाल एक्सप्रेस से महाराज मालदा से मठ को लौटेंगे। उनकी अगवानी के लिए दक्षिणेश्वर स्टेशन पर गया था। वहाँ बहुत से भक्त एकत्र हुए थे। महाराज ने मठ में लौटकर जब सुना कि पीने का पानी नमकीन (खारा) हो गया है, तो मुझे बुलाकर कहा, ''तुम साधु-सेवा करना। रोज मेरे लिए अलमुनियम फैक्ट्री से पीने का पानी ला देना।''

२७ मई, १९५६, निष्काम होना आसान नहीं

रात को महाराजजी के पास बैठते ही उन्होंने पूछा, ''क्यों रे, कुछ दे भी रहे हैं तुमको या केवल पानी ही ढुलवा रहे हैं?'' मैंने उत्तर में कहा, 'हाँ देते हैं।' सुनकर महाराज ने प्रश्न किया, ''तुम सकाम भक्त हो या निष्काम भक्त?'' मैंने उत्तर दिया, 'निष्काम'। मेरा उत्तर सुनकर महाराज ने कहा, ''अरे, निष्काम होना कोई सरल बात नहीं है रे ! स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्।'' थोड़ा-सा निष्काम हो जाने पर भारी भय से रक्षा हो जाती है। थोड़ी देर बाद ही देवघर के धी... महाराज ने आकर प्रणाम करके महाराज से कहा, महाराज सन् १९५४ में मेरी ब्रह्मचर्य-दीक्षा हुई। हमलोग आपके पास सबेरे आए थे, आपने बहुत-सी सुन्दर-सुन्दर बातें बताई थीं। उनकी बात सुनकर महाराज ने कहा, ''सब vows (प्रतिज्ञाओं) का पालन करते हो तो?'' धी... ने उत्तर दिया, 'प्रयास करता हूँ।'

''प्रयास क्यों? प्रतिज्ञाओं का पालन कर सकोगे, यही मानकर तो ब्रह्मचर्य दीक्षा दी गई है।''– महाराज ने कहा।

धी... महाराज, ''आपने मधुमक्खी की बात कही थी, नीम के पेड़ में सब कुछ होता है, लेकिन मधुमक्खी उसमें

से केवल मधु का ही संग्रह करती है। आपने प्रतिज्ञाओं को प्रतिदिन पढ़ने और कंठस्थ करने को कहा था। मैं प्रतिदिन पढ़ता हूँ और प्राय: कण्ठस्थ हो गयी हैं।''

महाराज – ''प्रतिदिन पढ़ते हो? हाँ, प्रतिदिन स्मरण करना होगा, अग्नि को साक्षी करके क्या प्रतिज्ञा की है ! केवल पढ़ने से क्या होगा ! हमेशा ठाकुर को सामने रखना होगा। हमेशा उनको पकड़े रहना होगा। उनको छोड़ा कि गए। ''त्यागीश्वर हे नरवर; देह पदे अनुराग। वंचन काम कांचन अति निन्दित इन्द्रिय राग।'' यह उद्धृत करके महाराज ने मुझसे प्रश्न पूछा, ''बोलो तो, अतिनिन्दित इन्द्रियराग का क्या अर्थ है?'' मैंने उत्तर दिया, इन्द्रियों की आसक्ति अत्यन्त निन्दित है।

सुनकर महाराज ने कहा, ''इन्द्रियों की आसक्ति का त्याग करना होगा। इन्द्रियों को बहिर्मुख करके सृष्टि हुई है, उनको अन्तर्मुख करना होगा। लगाम खींचे रखना होगा। जो जितना ही लगाम खींचकर रखेगा, उसका जीवन उतना ही सफल होगा। नन्हें पौधों के चारों ओर घेरा बनाना होगा। किसका घेरा? विवेक का घेरा। टेक केयर ऑफ दि मीन्स, दि एन्ड क्लि टेक केयर ऑफ इटसेल्फ।''

४ जून, १९५६, भाव को लेकर ही सभी बातें हैं

रात को महाराजजी के पास बैठा था, अचानक निष्काम कर्म की बात उठी। बात उठते ही महाराज ने मुझसे प्रश्न किया, क्यों रे, रा... निष्काम कर्म कर पाता है ! मैंने उत्तर दिया, ''नहीं, नाम, यश की थोड़ी कामना है।'' उत्तर सुनकर महाराज ने पुन: प्रश्न किया, ''क्या होने पर निष्काम कर्म किया जा सकता है?'' मैंने उत्तर दिया, ''अगर यह दृढ़ धारणा हो कि प्रत्येक काम ठाकुर का है, ऐसा होने पर ही सच्चा निष्काम कर्म किया जा सकता है।''

महाराज – यह धारणा कैसे हो सकती है कि प्रत्येक काम ठाकुर का है?

मैं – यदि जीव-जगत् से लेकर अणु-परमाणु तक में ठाकुर को देखा जा सके, तभी यह भाव आता है कि सब काम उनके हैं।

महाराज – यह कैसे हो सकता है?

मैं – ठाकुर के ऊपर जिसका जितना प्रेम होगा, वह उतना ही यह भाव उपलब्ध करेगा। मेरा उत्तर सुनकर बुढ़ऊ बहुत प्रसन्न होकर बोले, परीक्षा में पास हो गए हो, १०० में १०० नंबर मिला है। कुछ देर बाद फिर बोले, सारी बातें भाव को लेकर है ! भाव के परिपक्व होने पर ही भक्ति होती है !

१९ जून, १९५६, कौआ और क्या?

रात को महाराजजी के पास गया था। बातों-बातों में पहले दिन महाराजजी के साथ कैसे बातचीत हुई थी और क्या-क्या बातें हुई थी, सब मैंने बताया। मेरा विवरण सुनकर वे बोले, वाह ! अच्छी तरह मन में रखा तो है ! यह कहकर महाराज ने मायावती की एक घटना बताई – मायावती में काठ का कमरा है, ऊपर 'सेलेट' दिया है, जिस पर से बर्फ ढलककर नीचे गिर जाये। कमरे के बीच में लकड़ी का 'पार्टिशन' है। ऊपर की जगह खाली है। मेरे पास के ही कमरे में एक व्यक्ति रहते थे। एक दिन वे काफी देर से सोने को आये, तो मैंने प्रश्न किया, क्यों महाशय, इतनी देर कहाँ थे ? उन्होंने कहा, ''मो...के कमरे में तुलसी रामायण का पाठ हो रहा था, वहाँ।'' मैंने जानना चाहा कि कौन-से स्थल का पाठ हो रहा था। उन्होंने बताया, कागभुशुंडि का प्रसंग। ओह, क्या ही अद्भुत प्रसंग है !

उनकी बात सुनकर मैंने कहा, कागभुशुंडि तो रामचन्द्र के बड़े भक्त थे? तो जरा बताइए न, सुनूँ, तुलसीदास ने क्या कहा है? मेरी बात सुनकर वे कुछ न कहकर मौन साधे रहे। मैंने सोचा, क्या बात है, कहीं सो तो नहीं गए ! यह सोचकर कुछ देर बाद उन्हें पुकारकर बोला, क्यों महाशय, सो गए क्या? कागभुशुंडि की बात कुछ नहीं बताई ! पुकार सुनकर उन्होंने उत्तर दिया, ''वही कौआ और क्या !''

इस घटना को बताकर महाराज ने कहा, ''समझा, बहुत-से लोग इसी प्रकार का व्यवहार करते हैं और बहुत-से लोग अच्छी तरह मन में धारण करते हैं। तुमने देखा, तो उन्होंने क्या कहा – ''कौआ और क्या?'' मैं देख रहा हूँ, तुमने सब बातें मन में धारण कर रखी हैं। बहुत-से लोग हैं, जो बहुत-सी बातें सुनते हैं, लेकिन धारण नहीं कर पाते !

३ जूलाई, १९५६, अहंकार त्याग करके दीन हो

सन्ध्या होने के कुछ देर बाद महाराजजी के पास गया था। जाते ही उन्होंने पूछा, बुद्धदेव का चित्र देखा है? (रा.. बाबू चित्र बनवाकर महाराज के लिए लाये हैं। महाराजजी के पास जाने से पहले ही सेवकों के घर में चित्र को देखा था।) इसीलिये मैंने महाराजजी से कहा, ''देखा है, चित्र

सुन्दर बना है।''

बातचीत के क्रम में रा... बाबू ने कहा, परसों गुरु पूर्णिमा है, भक्तों की भीड़ होगी शायद।

रा... बाबू की बात सुनकर महाराज बोले, ठाकुर की संतानों के समय तो यह सब देखा नहीं, क्या जाने, उस समय मैं यहाँ नहीं रहता था।

रा... बाबू – उस समय हमलोगों की तरह लोक-दिखाऊ भक्त नहीं थे। इस समय तो हम लोगों का सब काम लोक-दिखाऊ है !

महाराज – हाँ, बाह्य प्रदर्शन और अहंकार – मेरी क्या भक्ति है ! अन्य लोग तो कुछ नहीं कर रहे हैं, मैं कर रहा हूँ। अहंकार गए बिना कुछ भी नहीं होने का। लोक-प्रदर्शन करने पर तो केवल अहंकार होगा, देखो, मैं किस तरह साधन-भजन कर रहा हूँ और वह बच्चू क्या कर रहे हैं? हमेशा विचार को सान पर चढ़ाते रहना होगा। विचार न रहने पर कुछ भी नहीं होगा। लोक-दिखाऊ भजन होने पर वहाँ विचार नहीं आता। देखो न ठाकुर का जीवन। ठाकुर के जीवन-काल में ही गिरीशबाबू और रामबाबू ठाकुर को अवतार कहकर भाषण देने लगे थे। यह सुनकर शिवनाथ शास्त्री ने सोचा, देखो इस महापुरुष के पास जाता, जाकर शान्ति पाता। लेकिन इन लोगों ने जो शुरू कर दिया है, उससे तो उस महापुरुष का मस्तिष्क ही खराब कर डालेंगे ! ठाकुर के गले में रोग हो गया था। काशीपुर में थे। बार बार कहते थे, शिवनाथ देखने नहीं आया ! ठाकुर के मन में उनके प्रति आकर्षण था ! शिवनाथ एक दिन देखने आये। ठाकुर ने उनसे कहा, कौन लोग मुझे अवतार बताते हैं? एक डाक्टर है और एक थियेटर (नाटक) करता है ! और फिर अवतार के गले में घाव है ! देख रहे हो, किस प्रकार उन्होंने अपने को छिपा कर रखा ! (साधना के समय) गला से जनेऊ उतार दिया, इससे अहंकार होगा, इसलिए ! यह क्या कि लोगों को दिखाते फिरें? नहीं, सब गोपन (गुप्त) रखकर ! ईसा क्या कहते थे, एक धनी आदमी के भगवान के राज्य में प्रवेश करने की अपेक्षा सुई के छेद में से ऊँट का निकलना कहीं अधिक सरल है। अहंकार, उपाधि का अहंकार, विद्या का अहंकार। इसीलिए ठाकुर कहा करते थे, ग्रंथ है कि ग्रंथि। फिर मूर्ख को भी अहंकार होता है – वह जानता ही क्या है ! ठाकुर कहते थे, काली किनारी की एक धोती पहनकर आदमी यों सीटी बजाना शुरू कर देता है। हाथ में कलम आते ही फर्र-फर्र लिखने लगता है। अहंकार कैसा होता है, जानते हो? जैसे एक लौहपिण्ड; उसे आग में तपाया जा रहा है। आग के ताप से लाल हो जाने पर लोहे का असली रूप ढँक गया है। मनुष्य के साथ भी ऐसा ही होता है। सिर के बाल से लेकर सब कुछ अहंकार से ढँका हुआ है। अहंकार को दूर करना होगा।'' 'कच्चे मैं' के स्थान पर 'पक्के मैं' को बैठाना होगा। अहंकार को भी एक आश्रय देना होगा। वह आश्रय क्या है? मैं 'माँ' की संतान हूँ। ईसा अपना किस रूप में परिचय देते थे? जोसेफ के पुत्र के रूप में? या, स्वर्गस्थ पिता की संतान के रूप में? बिलकुल हम लोगों का भाव। रामप्रसाद, माँ ब्रह्ममयी की संतान। ठाकुर अपना परिचय किस रूप में देते थे? 'माँ' की सन्तान के रूप में। उनकी पृष्ठभूमि में सब कुछ देखना होगा। ठाकुर से प्रश्न किया गया था, भगवान को देखा है? ठाकुर ने यह उत्तर दिया था – ''देखा है, तुमको जिस प्रकार देख रहा हूँ, उससे भी अधिक स्पष्ट देखा है।'' इसका अर्थ समझा? केवल व्याख्यान देने से क्या होगा? (जिसको संबोधित करके यह बात कही गई, वह वक्तृता दिया करते हैं, यह तथ्य महाराजजी जानते थे। केवल इतना ही नहीं, एक दिन महाराजजी ने इच्छा व्यक्त की, तो उनके कमरे में उनको वक्तृता देकर सुनानी भी पड़ी थी।) तुमको देखना तो प्रत्यक्ष देखना है। इससे भी अधिक स्पष्ट देखने का अर्थ क्या है? पहले उनको अर्थात् 'माँ' को देखना और उनकी पृष्ठभूमि में अन्य को देखना। यह देखना इस आँख से सम्भव नहीं है। ईसा इसीलिये कहते थे, ''ब्लेसेड आर द पुअर इन स्पिरिट फॉर दे शैल सी गॉड'' (वे दीन धन्य हैं, क्योंकि उन्हें भगवान् का दर्शन होगा)। यही दीन भाव लाना होगा। मैं, मुझे और मेरा के स्थान पर तू, तुझे और तेरा को बैठाना होगा।

३० जून, १९५७

आज शाम को महाराजजी के पास बैठा था। उसी समय बम्बई के एक भक्त दीक्षाप्रार्थी होकर महाराजजी के पास आये थे। साथ में सा... महाशय थे। उन्हीं भक्त के साथ महाराजजी बात कर रहे थे, तभी वृन्दावन के न... महाराज आकर प्रार्थना करके महाराजजी के चरणों के पास बैठे। कुछ देर बाद ही भक्त और सा... महाराज, महाराज को प्रणाम करके चले

शेष भाग पृष्ठ ५४२ पर

प्रश्नोपनिषद् (३१)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं । हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं । वैदिक धर्म की पुन: स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

यदुच्छ्वास-नि:श्वासावेतावाहुती समं नयतीति स समान:। मनो ह वाव यजमान:। इष्टफलमेवो-दान:। स एनं यजमानमहरहर्ब्रह्म गमयति।।४/४।।

अन्वयार्थ – यत् (चूँकि) (यह प्राण) उच्छ्वास-नि:श्वासौ (नि:श्वास-प्रश्वास-रूपी) एतौ (इन दोनों) आहुती (दोनों आहुतियों को) (शरीर-रक्षा हेतु) समम् (समता) नयति (प्राप्त कराता है), इति (अत:) स: (वह) समान: (समान, होता, हवनकर्ता) कहलाता है। ह वाव (वस्तुत:) मन: (मन ही) (देहस्थ अग्निहोत्र का) यजमान: (यजमान अर्थात् यज्ञफल का प्राप्तकर्ता है)। इष्ट-फलम् (अभीष्ट फल) एव (ही) उदान: (उदान है)। (क्योंकि) स: (वह उदान ही) एनम् (इस) (मनरूपी) यजमानम् (यजमान को) अह: अह: (प्रतिदिन) (सुषुप्ति के समय) ब्रह्म (ब्रह्म में) गमयति (ले जाता है)।।

भावार्थ – चूँकि (यह समान वायु-रूपी) नि:श्वास-प्रश्वास (ही) – (देहरक्षा हेतु) इन दोनों आहुतियों के बीच सन्तुलन बनाये रखता है, (अत:) वह 'समान वायु' (होता, हवनकर्ता) कहलाता है। वस्तुत: मन ही 'यज्ञकर्ता' है। 'उदान वायु' ही उसका अभीष्ट फल है। यह (उदान वायु ही) इस (मनरूपी) यजमान को प्रतिदिन (सुषुप्ति के समय) ब्रह्म में ले जाता है।।

भाष्य – अत्र च होता अग्निहोत्रस्य –

भाष्यार्थ – अब अग्निहोत्र का होता (हवनकर्ता) कौन है, यह बताते हैं –

भाष्य – यद्-यस्माद्-उच्छ्वास-नि:श्वासौ अग्निहोत्र-आहुती इव नित्यं द्वित्व-सामान्यात् एव तु एतौ आहुती समं साम्येन शरीर-स्थिति-भावाय नयति यो वायु: अग्नि-स्थानीय: अपि होता च आहुत्यो: नेतृत्वात्।

भाष्यार्थ – जिस कारण से नि:श्वास और प्रश्वास – ये दोनों अग्निहोत्र की आहुतियों की तरह हैं (हाथ के समान आगे-पीछे आते-जाते हैं), अत: इसमें नित्य दो क्रिया रहेगी। यह (बाहर-भीतर की) सामान्यता, इन आहुतियों को समान रूप से शरीर की स्थिति के लिए (चलाते रहना पड़ता है), जो (समान) वायु द्वारा नियंत्रित होता रहता है, उसका – अग्नि-स्थानीय होकर (भी) – आहुतियों को नेतृत्व करने से, अब 'होता' नाम पड़ गया।

भाष्य – क: असौ? स: समान:।

भाष्यार्थ – कौन है वह? वह समान (वायु) ही है।

भाष्य – अत: च विदुष: स्वाप: अपि अग्निहोत्र-हवनम् एव। तस्मात् विद्वान् (न) अकर्मी इति एवम् मन्तव्य: इति अभिप्राय:।

भाष्यार्थ – इस कारण से भी, ज्ञानियों की निद्रा भी अग्निहोत्र का हवन ही है। अत: ज्ञानी अकर्मी नहीं है, ऐसा मानना चाहिए। इसका यही अभिप्राय है।

भाष्य – 'सर्वदा सर्वाणि भूतानि चिन्वन्ति अपि स्वपते' इति हि वाजसनेयके। (शतपथ ब्रा. १०.५.३.१२)

भाष्यार्थ – वाजसनेयी ब्राह्मण में है – ''सर्वदा सोते हुए भी सारे प्राणी सर्वदा यज्ञ का सम्पादन करते हैं।''

भाष्य – अत्र हि जाग्रतसु प्राण-अग्निषु उपसंहृत्य बाह्य-करणानि विषयान् च अग्निहोत्र-फलम्-इव स्वर्गं ब्रह्म जिगमिषु: मनो ह वाव यजमानो जागर्ति यजमानवत्-कार्य-करणेषु प्राधान्येन संव्यवहारात् स्वर्गम्-इव ब्रह्म प्रति प्रस्थित-त्वात् यजमानो मन: कल्प्यते।

भाष्यार्थ – इस शरीर में प्राणाग्नियों के सदा जाग्रत रहने पर – मन, बाह्य करण (श्रोत्र आदि पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ) और उनके विषय (शब्द, स्पर्श आदि) – इनको उपसंहार (समाप्त) करके अग्निहोत्र के फल – स्वर्गरूपी ब्रह्म में जाने की इच्छा रखनेवाला मनरूपी यजमान जाग्रत रहता है – यजमान के समान सब कार्यों में (आदेशदाता के समान)

प्रधानता का आचरण करने से – मन ही ब्रह्मरूपी स्वर्ग की ओर जाता है। इन सादृश्यों को लेकर यजमान के रूप में मन की कल्पना की जाती है।

भाष्य – इष्टफलं यागफलम् एव उदानो वायुः। उदान-निमित्तत्वात्-इष्ट-फल-प्राप्तेः। कथम्? स उदानो मन-आख्यं यजमानं स्वप्न-वृत्ति-रूपात् अपि प्रच्याव्य अहरहः सुषुप्ति-काले स्वर्गम् इव ब्रह्म-अक्षरं गमयति। अतो याग-फल-स्थानीय उदानः।।

भाष्यार्थ – उदान वायु ही याग (वैदिक कर्म) का अभीष्ट फल है। क्योंकि उदान के द्वारा इष्टफल की प्राप्ति होती है। कैसे? यह मन नामवाले यजमान को स्वप्न-रूपी वृत्ति से भी हटा करके प्रतिदिन सुषुप्ति के समय, स्वर्ग-सदृश अक्षर ब्रह्म में ले जाता है। अतः याग का स्थानीय फल 'उदान' है।।४/४।।

***

भाष्य – एवं विदुषः श्रोत्र-आदि-उपरम-कालात्-आरभ्य यावत् सुप्त-उत्थितो भवति, तावत् सर्व-याग-फल-अनुभव एव न अविदुषाम् इव अनर्थाय इति विद्वत्ता स्तूयते।

भाष्यार्थ – इस प्रकार विद्वान् (प्राण का उपासक) – (निद्रा में) श्रोत्र आदि के लीन होने के काल से लेकर जागने तक – समस्त यागों के फल का ही अनुभव करता है; (उसकी निद्रा) अज्ञानियों के समान अनर्थकारी नहीं होती – इस प्रकार विद्वत्ता (अर्थात् प्राण की उपासना) की स्तुति की जा रही है।

भाष्य – न हि विदुषः एव श्रोत्र-आदीनि स्वपन्ते प्राण-अग्नयो वा जाग्रति जाग्रत्-स्वप्नयोः मनः स्वातन्त्र्यम् अनुभवत् अहरहः सुषुप्तं वा प्रतिपद्यते। समानं हि सर्व-प्राणिनां पर्यायेण जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्ति-गमनम् अतः विद्वत्तास्तुतिः एव इयम् उपपद्यते।

भाष्यार्थ – ऐसी बात नहीं कि (निद्रा के समय) उपासक की ही श्रोत्र आदि इन्द्रियाँ सोती हों और प्राण तथा अग्नि जागते रहते हों; वह जाग्रत तथा स्वप्न अवस्थाओं में मन की स्वतंत्रता का अनुभव करता हुआ, प्रतिदिन सुषुप्ति का अनुभव करता है; समान रूप से, समस्त जन्तुओं को क्रम से जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति में जाना होता है, अतः यह विद्या (उपासना) की स्तुति मात्र के लिए ही है, ऐसा कहना ही उचित होगा। **(क्रमशः)**

पृष्ठ ५४० का शेष भाग

गए। उन लोगों के चले जाने पर महाराज जी न... महाराज से वृन्दावन की बातें करते-करते देश का सामयिक प्रसंग उठाकर बोले, ''आज चारों ओर 'इकोनॉमिक ड्राइव' चल रहा है। जनसाधारण के ऊपर टैक्स लग रहा है। लेकिन जो चोरी हो रही है, वह बन्द कर सकते, तो फिर इसकी और आवश्यकता नहीं होती। आदर्श वाक्य है – 'सत्यमेव जयते', लेकिन सर्वत्र सत्यता का भारी अभाव है।''

उपसंहार – पूजनीय विशुद्धानन्द महाराज श्रीरामकृष्ण-वचनामृत के प्रेमी थे। वे स्वयं प्रतिदिन निष्ठा के साथ कथामृत पाठ करने को कहते। उनके कथोपकथन में घूम-फिरकर बार-बार श्रीरामकृष्ण-वचनामृत का प्रसंग आता। वे कहते थे, कथामृत में दो बातें हैं, 'डूब दाओ, एगिये पड़ो' – अर्थात् डुबकी लगाओ, आगे बढ़ो। यह डुबकी लगाने की बात ही वे भक्तों को सुनाते थे। इसीलिये उनकी बात सबके मन को स्पर्श करती।

तव कथामृतम्...

''डुबकी लगाओ ! ईश्वर को प्रेम करना सीखो ! उनके प्रेम में मग्न होओ !''

स्वामी विशुद्धानन्द जी के उपदेश –

यह क्या ऐसी-वैसी विद्या है। 'अध्यात्मविद्या विद्यानाम्'। सब विद्याओं से श्रेष्ठ विद्या है – ब्रह्मविद्या। 'कथामृत' प्रतिदिन थोड़ा पढ़ना। कथामृत के पाँचों खण्डों में उनके क्या-क्या प्रधान निर्देश हैं? (एक भक्त महिला ने कहा, ''पहले ईश्वर, बाद में संसार', ''डुबकी लगाओ' और 'आगे बढ़ो')।

अध्यक्ष ने कहा, ''वाह, तुमने तो एक सौ में पूरे सौ पा लिये। ... केवल पढ़ने से नहीं होता। तीनों चाहिए – श्रवण, मनन, निदिध्यासन। तब उपदेश की धारणा होती है।

''संसार क्यों छोड़ना? ठाकुर क्या केवल संन्यासियों के लिये आए थे? सबके लिए उनका आगमन हुआ था। संसार में रहना पड़ रहा है, तो ठीक है, उनको 'पहले' बैठाओ। यदि स्वयं को आगे बैठाओगे, तो सब गड़बड़ हो जाएगा। जैसे भी हो, जो व्यक्ति उनको पहले बैठाकर गृहस्थ-कर्म करते हैं, वे उत्तम गृहस्थ हैं।'' ○○○ **(समाप्त)**

आध्यात्मिक जिज्ञासा (८४)

स्वामी भूतेशानन्द

– मिशन का इतना नाम, क्या केवल प्रचार से या आदर्श की व्यापकता से हुआ है?

महाराज – प्रचार के कारण हुआ है। लोग इस विषय में अधिक सचेत हुए हैं, उनकी अधिक रुचि हुई है। किन्तु सभी लोग आदर्श के सम्बन्ध में उत्साहित होकर दीक्षा लेते हैं, ऐसी बात नहीं है। बहुत-सा पारम्परिक हो जाता है। इसका विपरीत परिणाम यह है कि जिनकी दीक्षा हो रही है, वे लोग अपने गुरु को ही नहीं पहचानते ! जबकि दीक्षा लिये हुये हैं। एक बार कई लोग आये थे, पूछ रहे हैं, हमारे गुरुदेव कहाँ है? उनसे पूछा गया, तुमलोगों के गुरु कौन हैं? तब जिसने पूछा था, वह दूसरे को पूछ रहा है – कौन हैं रे? गुरुदेव को नहीं पहचानते, नाम भी नहीं जानते। अभी जो दीक्षार्थियों की इतनी भीड़ हो रही है, सभी लोग अपनी रुचि या आदर्श से आकर्षित होकर आ रहे हैं, ऐसा नहीं है। फिर किसी-किसी को लगता है कि बेलूड़ मठ से दीक्षा लिया हूँ, यह सम्मान की बात है। इस तरह विभिन्न प्रकार से आकर्षित होकर लोग आ रहे हैं। क्योंकि विस्तार हुआ है, इसलिए ऐसा हो रहा है। पहले-पहल जो लोग दीक्षा लेने आते थे, राजा महाराज उनकी बहुत सीमित संख्या रखते थे। बहुत कम।

– नहीं, तब ये जो अधिक संख्या में दीक्षा हो रही है या दी जा रही है, इससे क्या हमारे संघ का उद्देश्य सफल हो रहा है?

महाराज – उद्देश्य अर्थात् वे लोग इसके द्वारा रामकृष्ण मठ-मिशन का आदर्श और अपने जीवन-निर्माण का पथ जान सकते हैं।

– नहीं महाराज, जो लोग पारम्परिक ढंग से आ रहे हैं, उनकी बात कह रहा हूँ।

महाराज – उनलोगों की धीरे-धीरे आदर्श की ओर सजगता आयेगी, ऐसी आशा की जा सकती है।

– एक दूसरी बात देखी जाती है, रामकृष्ण मठ-मिशन में जब कोई संकट आता है, कोई समस्या आती है, तब भक्तों की ओर से कोई समर्थन नहीं मिलता।

महाराज – कुछ समर्थन अवश्य मिलता है। बिल्कुल नहीं मिलता है, ऐसा नहीं है। समर्थन मिलता है, किन्तु वह पर्याप्त नहीं होता। उसका कारण है कि उनकी क्षमता कम है। इस सम्बन्ध में उनलोगों का चिन्तन भी कम है। लेकिन वे लोग चाहते हैं कि रामकृष्ण मठ-मिशन निर्विघ्न रूप से उन लोगों का कार्य करता रहे।

– आप लोगों ने जब किसी केन्द्र में राहत या अन्यान्य कार्य किया, तब रामकृष्ण मिशन के प्रति जन-साधारण का कैसा दृष्टिकोण देखा है?

महाराज – राहत-कार्य के क्षेत्र में हमलोगों ने बिल्कुल अपरिचित लोगों में कार्य किया है। इसलिए वहाँ लोगों का आकर्षण कुछ पाने के लिए हुआ है। वे लोग भी कुछ दे सकते हैं, ऐसा वे लोग नहीं सोचते थे। इसलिए राहत-कार्य का प्रतिफल ऐसे नहीं दिखता था। किन्तु यह साधुओं के जीवन में प्रगति का एक पथ होता है। किन्तु समाज इस सम्बन्ध में अधिक सचेत नहीं है।

– राहत-कार्य के अतिरिक्त सामान्य रूप से मिशन के अन्यान्य कर्मों के साथ जो लोग संयुक्त हैं, वे ऐसे ही आते हैं या आदर्श की प्रेरणा से आते हैं?

महाराज – देखो, साधुओं की ओर या आदर्श की ओर जो आकर्षण है, वह समान रूप से जनता में नहीं पाया जाता है, कभी भी नहीं पाया जाता है। किसी भी युग में यह नहीं हुआ। किन्तु इसमें जो लोग उत्साही हैं, उन लोगों ने जीवन का निर्माण करने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त अधिकांश घिसे-पिटे हैं।

– आपने तो द्वितीय विश्वयुद्ध देखा है, अनेक कार्य किया है। स्वतन्त्रता संग्रामियों के साथ मिशन का सम्बन्ध कैसा था?

महाराज – स्वतन्त्रता संग्रामियों में दो दल था। एक दल

था, जो हमलोगों को बहुत अच्छी दृष्टि से नहीं देखता था। एक दूसरा दल था, जो हमलोगों के आदर्श से आकर्षित था। उनमें से कोई-कोई हमारे संघ के साधु बने। जो ऐसा नहीं कर सके, उनलोगों ने आदर्श को ग्रहण कर अपने अनुसार जीवन व्यतीत किया है।

– इससे मिशन का कार्य भी तो बाधित हुआ है। भारत सरकार मिशन के बारे में विभिन्न प्रकार से सोचने लगी।

महाराज – जो स्वतन्त्रता-सेनानी थे, विशेषकर क्रान्तिकारियों से हमलोगों का सम्बन्ध रहने के कारण तत्कालीन अंग्रेज सरकार हमलोगों पर बड़ी तीक्ष्ण दृष्टि रखती थी, यह सोचकर कि ये लोग क्रान्तिकारियों के प्रेरणा-स्थल हैं। उसका एक उदाहरण इस प्रकार है – तब बाबूराम महाराज थे। पुलिस ने आकर कहा – ''आपके यहाँ जो लोग आवागमन करते हैं, उनका नाम देना होगा।'' बाबूराम महराज ने जोर से कहा – ''हमलोग इस प्रकार नाम नहीं दे सकेंगे। तुमलोगों की इच्छा हो, तो तुमलोग गेट पर आदमी रखकर नाम लिखो। हमलोग नाम देंगे, ऐसी आशा नहीं की जा सकती।'' इस प्रकार संशय की दृष्टि से सरकार हमलोगों को देखती थी। किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद वैसा विचार नहीं रहा।

– स्वतन्त्रता के पहले रामकृष्ण मिशन का विस्तार और स्वतन्त्रता के बाद रामकृष्ण मिशन का विस्तार, ये दोनों आपको कैसा लग रहा है?

महाराज – स्वाधीनता के बाद कार्य का विस्तार द्रुतगति से हुआ है। स्वतन्त्रता के पहले कार्य इतनी द्रुतगति से नहीं बढ़ा। इसके दो कारण हैं – प्रतिबन्ध, अवरोध कम हुआ है और सरकार की सहायता बढ़ी है। इसीलिए हमलोगों के सभी केन्द्रों में कार्य का विस्तार बहुत हुआ है।

– ये जवाहर लाल नेहरू, गाँधीजी, जो स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्र-निर्माण में अग्रसर हुए, इन लोगों ने रामकृष्ण मिशन की सहायता की है, आपको कुछ ज्ञात है क्या?

महाराज – नेहरू, गाँधीजी? गाँधीजी बहुत उत्साही नहीं थे। हमलोगों के सेवा-कार्यों को वे किस रूप में देखते थे, मैं नहीं जानता। किन्तु नेहरूजी की श्रद्धा थी। सम्भवत: वे सोचते थे, हमलोग इस राष्ट्र-विकास के कार्य में उनलोगों जैसा योगदान नहीं कर पाते हैं, किन्तु आदर्शवादी दृष्टि से हमलोगों को श्रद्धाभाव से देखते थे।

– हमलोगों के कार्यों में क्या केन्द्र सरकार उस समय अनुदान देती थी?

महाराज – सरकार ने दिया है। चाहे वह केन्द्र सरकार हो या राज्य सरकार हो। राज्य सरकार तो हमलोगों की बहुत बड़ी भक्त है। बंगाल में बहुत रुपया दी है। विभाजन के बाद भी दी है। उसके कारण अनेक शिक्षा-संस्थान हू-हू करके बढ़ गये हैं। हमलोगों ने अपनी क्षमता से अधिक काम ले लिया है। इसीलिए अभी बहुत कष्ट हो रहा है। अभी कह रहा हूँ, ठीक ही, कैसे सम्भाले उसे? जैसे स्वामीजी ने कौशल-विकास शिक्षा पर अधिक जोर दिया है। हमलोगों ने कौशल-विकास की शिक्षा के लिए बहुत प्रचार नहीं किया है। बल्कि करने जाने पर बहुत बाधा हुई है। क्योंकि यहाँ जो शिक्षक या छात्र हैं, वे सच्चे आदर्शवादी नहीं हैं। वे हमारे आदर्श को ग्रहण नहीं करते हैं। लौकिक दृष्टि से सुविधा होगी, शिक्षा मिलेगी इसलिये वे लोग आये हैं। क्योंकि उनमें विक्षोभ हुआ है। इसीलिए विभिन्न स्थानों पर हमलोगों की दुर्दुशा हुई है। वह विचार अभी चला गया है, ऐसा नहीं लगता है।

प्रश्न – ठाकुर की सन्तानों की महासमाधि के बाद जो कमी हुई थी, उसे मिशन कैसे पूर्ण कर आगे बढ़ा?

महाराज – कमी इस प्रकार से कि ठाकुर की सन्तानों जैसा आध्यात्मिक-शक्तिसम्पन्न व्यक्तित्व हमलोगों के भीतर साथ-साथ निर्मित नहीं हुआ, निर्मित होगा भी नहीं। उसके बाद कार्य में बहुत विस्तार हुआ है। उनलोगों के बाद कार्य-क्षेत्र बहुत बढ़ गया है। यह बात मैंने पहले ही कही है कि इससे आध्यात्मिक जीवन थोड़ा बाधित हुआ है।

– स्वामीजी ने बालिकाओं को शिक्षित करना या उनके विकास की बात बहुत कही है।

महाराज – हाँ, स्वामीजी ने बालिकाओं के शिक्षा की बात बहुत कही है। रामकृष्ण मिशन के अन्तर्गत निवेदिता स्कूल था। उसके बाद हुआ महिला-मठ (सारदा मठ, दक्षिणेश्वर)। अभी महिला-मठ का बहुत विस्तार हुआ है। उनलोगों का कार्य बढ़ रहा है और दोनों संस्थाएँ ही आदर्श को ग्रहण कर आदर्श में प्रतिष्ठित होकर ही कार्य करने की चेष्टा कर रही हैं। किन्तु कठिनाई यह है कि अधिक कार्य करने के कारण सामान्य जनता से हमलोगों का सम्बन्ध

शेष भाग पृष्ठ ५७४ पर

श्रीरामकृष्ण-गीता (१८)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

(स्वामी पूर्णानन्द जी रामकृष्ण संघ के वरिष्ठ संन्यासी हैं। उन्होंने २९ वर्ष पूर्व में इस पावन श्रीरामकृष्ण-गीता ग्रन्थ का शुभारम्भ किया था। इसे सुनकर रामकृष्ण संघ के पूज्य वरिष्ठ संन्यासियों ने इसकी प्रशंसा की है। विवेक-ज्योति के पाठकों के लिए बंगला भाषा से इसका हिन्दी अनुवाद रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर के स्वामी कृष्णामृतानन्द जी ने की है। – सं.)

त्यक्त्वा सारं ततोऽसारमादत्ते चालनी यथा।
रक्षत्यभ्यन्तरे चैव तद्वत् केचित् जना इह।।
परित्यज्येश्वरं सारमसारं कामकाञ्चनम्।
परिगृह्णन्ति संसारे चालनीव सदैव ये।।७-८।।

– जिस प्रकार चलनी सार वस्तु त्याग करके असार वस्तु का ग्रहण करती है तथा अपने ही भीतर रखती है, उसी प्रकार इस संसार में कुछ लोग सार वस्तु ईश्वर को परित्याग करके सदा सर्वदा चलनी की तरह असार वस्तु कामकाञ्चनादि को ही ग्रहण करते हैं।।७-८।।

गोमयकीटवद्बिद्धि मनो विषयिणां नृणाम्।
गोमये मोदते स्थातुं नान्यत्तु गोमयं बिना।।९।।
कदापि रोचते तस्मै किमपि दीयते यदि।
कर्हिचित् पद्ममध्येऽयं प्रसभं स्थाप्यते यदि।।१०।।
भवेन्मृतवदस्वस्थस्तद्वद्विषयिणां नृणाम्।
मनसे रोचते किञ्चिन्न विषयकथामृते।।११।।

– विषयी लोगों के मन को गोबर के कीडे जैसा जानना। गोबर का कीड़ा गोबर में रहना पसन्द करता है। अगर गोबर के बिना उसे दूसरा कुछ दिया जाये, तो वह उसे कभी भी अच्छा नहीं लगता। अगर बलपूर्वक कमल फूल के भीतर कभी उसे रख दिया जाये, तो फिर अस्वस्थ हो छटपटाने लगता है, मृतप्राय हो जाता है। उसी प्रकार विषयी मनुष्यों के मन को विषयी बातों को छोड़कर अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता है।।९-११।। **(क्रमशः)**

श्रीमाँ सारदा देवी के पत्र

श्रीकालीमाता

८ कार्तिक

प्रिय बेटा, शुभाशीर्वाद।

तुम्हारे पत्र से सारे समाचार मालूम हुए।

प्रिय बेटा, तुमने पत्र में खूब साधन-भजन करने की बात लिखी है। तुम साधना कर रहे हो। एक मन से भगवान को पुकारने पर ठाकुर दया करके तुम्हारी इच्छा पूरी करेंगे, तुम्हें सिद्धि-लाभ प्रदान करेंगे, यह मैं निश्चयपूर्वक कह रही हूँ, इसमें कोई भूल नहीं होगी। मैं तुम्हारे विजयादशमी का प्रणाम ग्रहण करती हूँ। मैं स्वस्थ हूँ। मेरा आशीर्वाद तुम ग्रहण करना। सभी को मेरा आशीर्वाद देना। यहाँ सभी स्वस्थ हैं। तुम लोगों की कुशलता का समाचार लिखना। मेरा आशीर्वाद मिसेस सेवियर, ग्रीन्स्टिडल आदि सबको देना। इति।

तुम्हारी
माँ

मायावती मठ ठाकुर के नाम पर अर्पण कर रहे हो यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। इति।

पत्र पाने वाले का नाम : स्वामी विरजानन्द

जय माँ

३ फाल्गुन
जयरामवाटी

तुम्हारे पत्र से सारे समाचार मालूम हुए। तुम मेरा आशीर्वाद ग्रहण करना। ध्यान के सम्बन्ध में तुमने जो लिखा है, वह मैंने सुना। किसी का भी ध्यान सहज ही नहीं होता। जब मन की सारी वृत्तियाँ शान्त हो जाती हैं, तब मनुष्य का मन स्थिर होता है एवं उसी समय ध्यान होता है। अभी तुम्हें जो मन्त्र मिला है, उसका जप करो। धीरे-धीरे तुम्हारा मन स्थिर होगा, तब तुम ध्यान कर सकोगे, परन्तु इसमें पूर्ण विश्वास रखना होगा। मेरी तबीयत ठीक है।

तुम्हारी
माँ

विशेष द्रष्टव्य :

पत्र में तारीख और पता नहीं है।

श्रीमाँ सारदा का प्रबन्धन

स्वामी अलिप्तानन्द

अनुवादिका : रीता घोष, बैंगलुरु

भारत पुण्यभूमि, कर्मभूमि, धर्मभूमि तथा साधनभूमि है, हमारा यह देश सीता, सावित्री एवं दमयन्ती का देश है, श्रीमाँ उसी सनातन धारा सम्पदा की सार्थक प्रतिनिधि हैं, उनका आविर्भाव एवं आदर्श गृहस्थधर्म का आचरण, हमारे देश की सभी गृहिणियों के लिए नि:सन्देह रूप से अनुकरणीय है, इस चर्चा में हम देखेंगे कि आधुनिक स्वार्थपूर्ण इस संसार में अधिकारी भेद से प्राप्य सम्मान सभी को दिया जाना चाहिए।

श्रीमाँ अपने प्रबन्धन द्वारा कैसे और कितने प्रकार से संसार में शान्ति बनाए रखती थीं, इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। गृहस्थ जीवन में गृहिणी के लिए सूक्ष्म बुद्धि और सद्य: प्रत्युत्पन्न बुद्धि की अत्यन्त आवश्यकता होती है। किसी भी क्षण अकस्मात् उपस्थित होनेवाली परिस्थिति में उपयुक्त रूप से व सटीक रूप से उसे सम्भालने की क्षमता का होना भी आवश्यक होता है। श्रीमाँ की जीवनी का अध्ययन करने से पता चलता है – एक बार कलकत्ते से जयरामबाटी लौटते समय जयपुर नामक गाँव की एक धर्मशाला में रुककर श्रीमाँ एवं उनके अन्य साथी मिलकर भोजन पकाने का प्रबन्ध करने लगे। चूल्हे से तैयार भात उतारते समय मिट्टी की हाँड़ी टूट गयी और सारा अन्न चारों ओर बिखर गया। सभी ऐसी दुर्दशा देखकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये, पर श्रीमाँ थोड़ी-भी विचलित नहीं हुईं। उन्होंने पुआल द्वारा धीरे-धीरे मांड़ को हटाकर ऊपर-ऊपर से समस्त भात को निकालकर एकत्र कर लिया, फिर बक्से में से ठाकुर की फोटो को निकाला और एक शाल के पत्ते पर अल्प-अल्प परिमाण में भात-दाल और सब्जी को परोसकर ठाकुरजी को निवेदन करते हुए कहा – ''आज आपने ऐसा ही निर्दिष्ट किया है, तो अब इसी प्रकार से जल्दी-जल्दी, गरम गरम थोड़ा अन्न ग्रहण कर लीजिए।'' माँ की बातें सुनकर एवं उनका निवेदन देखकर सभी लोग हँसने लगे, परन्तु माँ इस पर जरा भी संकुचित नहीं हुई और कहा – 'जहाँ जैसा वहाँ वैसा' ही करना चाहिये।'' उसके बाद उन्होंने बाकी सभी लोगों को भोजन परोसकर खिलाया। इस घटना से माँ की तात्कालिक सद्य: प्रत्युत्पन्नमति का परिचय मिलता है।

पगली मामी की बेटी राधू के ससुराल में उपहारादि भेंट भेजना था। दूसरी ओर नलिनी दीदी और पगली मामी के बीच घोर कलह था। माँ राधू को अधिक प्यार करती हैं, इस बात को लेकर माँ को खरी-खोटी सुनाना या फिर माँ के कार्यों में गलतियाँ निकालना नलिनी दीदी का स्वभाव बन गया था। माँ के पैसे से उपहार का समान खरीदा जाएगा, इस बात पर किसी को कुछ कहने की आवश्यकता है नहीं, पर नलिनी दीदी माँ के अच्छे कार्य पर भी गलतियाँ निकालेंगी और मन ही मन दुखी भी होंगी, यह सोचकर माँ ने सामानों की एक छोटी-सी सूची बनाकर नलिनी दीदी से कहा – 'देख तो नलिनी इतना ही सामान भेजने से चलेगा न?' नलिनी दीदी ने कहा – ''यह क्या बुआ ! वे लोग जैसे भी व्यवहार करें और राधू भी तो एक पगली ही है, उसे कोई समझ ही नहीं है, पर आपकी तो एक मर्यादा है, आप इस प्रकार से हीन दृष्टि क्यों रखेंगी, बुआ? आप अपने ढंग से ही कार्य करें, ऐसा कहकर उन्होंने सामानों की सूची को और अधिक बड़ा बना दिया। माँ का उद्देश्य भी पूरा हो गया और नलिनी दीदी भी खुश हुईं। इस प्रकार नलिनी दीदी का सुझाव लेकर माँ ने उपहार भेजा। माँ कहती थीं – ''गृहस्थी में सबको थोड़ा-थोड़ा अधिकार देकर स्वयं को थोड़ा झुकाकर चलना पड़ता है।'' अर्थात् संसार में सभी

का परामर्श लेकर, सबको थोड़ा सम्मान देकर काम करने से स्वतन्त्रता घटती नहीं है, अपितु शान्ति बनी रहती है। इस प्रकार माँ ने परिस्थिति का बड़ा सुन्दर ढंग से प्रबन्धन किया।

एक बार बेलूड़ मठ का एक नौकर चोरी करने के अपराध में नौकरी खोकर अत्यन्त दुखी होकर सीधा 'मायेर बाड़ी, उद्बोधन' बागबाजार में माँ के समीप जाकर रो पड़ा, माँ ने सोचा कि अत्यन्त अल्प वेतन के कारण गृहस्थी चला पाने में असमर्थ होने के कारण ही सम्भवत: उसने चोरी किया होगा। माँ ने उसे प्यार से प्रसाद खिलाया एवं प्रेमानन्द महाराज को बुलाकर उसे पुन: नौकरी पर रखने को कहा। स्वामीजी असन्तुष्ट होंगे, ऐसा सोचकर बाबूराम महाराज उसे मठ में ले जाने से डर रहे थे। लेकिन जब माँ ने कहा कि 'वह व्यक्ति बड़ा ही दरिद्र है एवं अभाव के कारण ही ऐसा कार्य किया है, इसके कारण नरेन ने उसे डाँट-डपेट कर निकाल दिया। गृहस्थी बड़ा ही कठिन है। तुमलोग संन्यासी हो, तुमलोग तो कुछ समझते नहीं हो, उसे वापस ले जाओ।'' माँ का आदेश ही स्वामीजी का अन्तिम निर्णय होता था। अत: वह व्यक्ति फिर से काम में रख लिया गया।

स्वामीजी कहते हैं – छोटी-मोटी घटनाओं द्वारा ही मनुष्य का वास्तविक चरित्र समझ में आता है। जयरामवाटी में एक दिन सन्ध्या समय सिर पर पगड़ी बाँधे हुए एक भिखारी माँ के घर के द्वार पर आया। उसकी आवाज सुनकर छोटी मामी घर से बाहर निकलकर आईं, परन्तु असमय द्वार पर खड़े अपरिचित पुरुष को देखकर भयभीत होकर दौड़कर माँ के पास चली गईं। लेकिन बिना भयभीत हुए माँ ने धीर भाव से बाहर आकर दृढ़ता के साथ प्रश्न किया – 'कौन है?' भिखारी ने उत्तर दिया। उसके कंठस्वर सुनते ही माँ समझ गईं कि यह कोई और नहीं, भिखारी की वेश में उन्हीं की गौरदासी – सबकी प्रिय गौरी माँ है। यह घटना एक ओर जितनी कौतुकप्रद है, दूसरी ओर उतनी ही अप्रत्याशित परिस्थितियों में भी श्रीमाँ कितनी मानसिक स्थिरता और धैर्य का परिचय देती थीं, इसका एक उदाहरण है।

श्रीमाँ ने दिखाया कि स्वार्थबुद्धि त्याग कर किस प्रकार सबसे प्रेम किया जा सकता है, अपना-पराया का विचार न कर संसार में लिप्त न होकर भी कितने निराश्रयों को आश्रय दिया जा सकता है। अनेक विचित्र-विरुद्ध स्वभाव मनुष्यों के मध्य रहकर भी उन्होंने नीरव, नि:शब्द सेवा की, जिसका वर्णन करने में कोई भी भाषा असमर्थ-सी प्रतीत होती है। इस गृहस्थी के लिये उन्होंने क्या नहीं किया ! राधू का सहस्र अत्याचार, शारीरिक यातना भी उन्होंने सहन किया, पगली मामी की असहनीय डाँट-फटकार को 'पागल का प्रलाप' समझकर उसकी उपेक्षा की। नलिनी दीदी की शुचिता का विकार जब सभी लोगों की सहनशक्ति की सीमा को पार कर गया, तब भी श्रीमाँ का स्नेह-प्रवाह उनके लिए थोड़ा भी नहीं रुका। ईर्ष्यालु भाई-भतीजियों के स्वार्थपूर्ण कलह को असीमित धैर्य के साथ उन्होंने सँभाला। जो माँ हजार-हजार नर-नारियों द्वारा जगज्जननी के रूप में पूजी जाती हैं, ऐसी ही गृहस्थी के कारण उन्हें एक बार लालची ब्राह्मण के पैर पकड़ कर मनाना पड़ा था। जिस संसार को उन्होंने केवल आदर्श की स्थापना के लिए ग्रहण किया था,वही संसार उन्हें अकृतघ्न बनकर पीड़ा देता रहा, फिर भी संसार की सेवा में माँ को कभी क्लान्ति नहीं आई, प्रतिदान की आशा न रखते हुए सबके प्रति यथोचित कर्त्तव्यों को सुचारु रूप से वह निभाती गईं।

श्रीमाँ किसी भी समस्या का समाधान तत्क्षणात् कर देती थीं। उनके युक्तिपूर्ण मीमांसा को सभी लोग निसन्दिग्ध स्वीकार कर लेते थे। स्वामीजी के द्वारा बेलूड़ मठ में पहली बार दुर्गापूजा करने की इच्छा व्यक्त करने पर कई लोग सहमत नहीं हुये। तब इसके लिये स्वामीजी ने श्रीमाँ से पूछा। श्रीमाँ ने तत्क्षणात् उत्तर देते हुए कहा – ''हाँ बेटा, मठ में दुर्गापूजा कर शक्ति की आराधना अवश्य करोगे। शक्ति की आराधना के बिना जगत में क्या कोई भी कार्य सफल होता है? पर बेटा, बलि मत चढ़ाना। प्राणी की हत्या मत करना, तुमलोग संन्यासी हो, सर्वभूतों को अभयदान करना ही तुमलोगों का व्रत है।''

कलकत्ते में प्लेग-महामारी के समय स्वामीजी ने निवेदिता एवं अन्य कई लोगों के साथ सेवाकार्य प्रारम्भ किया। परन्तु सेवा-कार्य दिनोंदिन बढ़ने एवं आवश्यकतानुसार अर्थ की व्यवस्था नहीं होने पर स्वामीजी चिन्तित हो गए। अन्तत: सेवा कार्य बाधित न हो, इसलिये उन्होंने बेलूड़ मठ को बेचने की इच्छा व्यक्त की। इस बात की चर्चा माँ से करने पर माँ ने तत्क्षण कहा – ''यह क्या बात हुई बेटा ! बेलूड़ मठ को कैसे बेचोगे? मठ की स्थापना करते समय मेरे नाम से संकल्प किया है एवं ठाकुर के नाम से समर्पित किया

है, तुम्हें ये सब बेचने का अधिकार ही कहाँ हैं? बेलूड़ मठ क्या केवल एक सेवा कार्य में ही समाप्त हो जाएगा?'' तब स्वामीजी ने कुछ लज्जित होकर कहा – ''ओह ! आवेशपूर्ण होकर मैं क्या करने जा रहा था। सही बात है, मठ तो मैं बेच नहीं सकता, यह अधिकार मुझे नहीं है, यह बात तो मेरे ध्यान में ही नहीं थी।'' ये बातें जयरामबाटी की एक ग्रामीण महिला जैसी नहीं हैं। वास्तव में माँ की बातें एक निपुण बैरिस्टर जैसी लगती हैं।

१९१६ ई. के अन्त में बंगाल के लाट लार्ड कारमाईकेल ने अपने दरबार भाषण में रामकृष्ण मिशन के साथ क्रान्तिकारी विद्रोहियों के गोपनीय सम्बन्ध रहने की बात कर दोषारोपण किया। इससे रामकृष्ण मिशन संकटग्रस्त हो गया। इसलिये गृही भक्तगण रामकृष्ण मिशन के साथ सम्पर्क रखने से भयभीत होने लगे। कई लोग तो स्वामी सारदानन्द महाराज को ऐसे परामर्श देने लगे कि जो साधु लोग पूर्वजीवन (पूर्वाश्रम) में विद्रोही कार्यों में लिप्त थे, उनलोगों को संघ से बाहर निकाल दिया जाए। महाराज के द्वारा माँ को सभी बातों की जानकारी देने पर माँ ने कहा – ''ये सब किस प्रकार की बातें है ! ठाकुर सत्यस्वरूप हैं, जो लड़के उनको आश्रय कर, उनका भाव लेकर संसार त्यागकर गेरुआ धारणकर संन्यासी बने हैं, देश के लिए, देशवासियों के लिए एवं दु:खियों की सेवा के लिए आत्मनियोग किये हैं, संसार के भोग-सुखों का त्याग कर दिया है, वे लोग मिथ्याचार क्यों करेंगे, बेटा? तुम एक बार लाट साहब के साथ मिलो। वह राजप्रतिनिधि है, तुमलोगों की कार्यधारा उनको समझाकर बताने से वे अवश्य ही सुनेगें।'' माँ ने फिर कहा – ''ठाकुर की इच्छा से मठ मिशन की प्रतिष्ठा हुई है, राजरोष में नियम का उल्लंघन करना अधर्म है, ठाकुर के नाम से जो संन्यासी हुए हैं, वे सभी मठ में रहेंगे, अन्यथा कोई भी नहीं रहेगा, मेरी संतान ये लड़के वृक्ष के नीचे आश्रय लेंगे, पर सत्य-भंग नहीं करेंगें।'' माँ के परामर्श में स्वामी सारदानन्द महाराज जी ने लार्ड कारमाईकेल के साथ भेंट किया तथा रामकृष्ण संघ का लक्ष्य व आदर्शों के बारे में उन्हें सविस्तार समझाया। इस चर्चा के पश्चात् लार्ड कारमाईकेल ने अपने पूर्व वक्तव्य को वापस ले लिया तथा उस पर दु:ख व्यक्त किया। श्रीरामकृष्ण के स्थूलदेह में रहते समय श्रीमाँ जिस प्रकार से उनका सब प्रकार से देख-भाल करती थीं, उसी प्रकार से उन्होंने श्रीरामकृष्ण के प्रत्यक्ष संघ-शरीर के भाव, आदर्श और मर्यादा की सदा रक्षा करते हुए उसे पुष्ट बनाया तथा संघ के संन्यासियों को भी इसके बारे में सचेत किया। ठाकुर के शरीर जाने से पहले ठाकुर ने माँ को कहा था – ''मेरे नहीं रहने पर कामारपुकुर के अपने घर में रहना, शाक-सब्जी बोना, उसी से भात खाना और हरिनाम करते रहना, किसी के भी सम्मुख हाथ मत फैलाना।'' ठाकुर का यह निर्देश सुनने में तो सहज लगता है, लेकिन पालन करने में बहुत ही कठिन था। श्रीमाँ की आर्थिक अवस्था उस समय बहुत खराब थी। दक्षिणेश्वर से मिलनेवाला मासिक रुपए की सहायता भी बंद हो जाने से भात के साथ नमक भी जुटाना कठिन हो गया था, तन के वस्त्र में गाँठें बाँधकर पहनना पड़ता था, पर श्रीमाँ को कोई भी अभाव बोध नहीं था। मासिक सात रुपये की मिलनेवाली सहायता राशि बन्द होने से श्रीमाँ कहतीं – ''वे सोने जैसे मनुष्य ही चले गए, तो रुपए लेकर मैं क्या करूँगी?'' सबके साथ सामंजस्य बनाकर चलने की क्षमता माँ में थी। वे स्वयं ही स्वीकार करती थीं कि आनन्द से पूर्ण घड़ा उनके हृदय में सदा ही विद्यमान रहता था। वास्तव में श्रीमाँ ने किसी भी स्थान में एवं किसी भी अवस्था में अशान्ति से दिन नहीं बिताया। वे सभी अवस्थाओं में स्वयं को समान रूप से संजो लेती थीं।

श्रीमाँ की आश्रिता एक ब्राह्मण-कन्या थी, जो बाद में प्रव्राजिका भारतीप्राणा नाम से सारदा मठ की प्रथम अध्यक्षा बनीं। डाफटिन अस्पताल में नर्सिंग की ट्रेनिंग ग्रहण करने के बारे में गोलाप-माँ की प्रबल आपत्ति के बाद भी माँ ने उन्हें सहज ही अनुमति प्रदान की। वास्तव में माँ सच्ची संस्कार युक्त महिला थीं। विभिन्न वर्ण, जाति, धर्मों के मनुष्यों को श्रीमाँ अपने हाथों से परम यत्न के साथ खिलाती थीं। यहाँ तक कि उनके जूठनों को स्वयं ही साफ किया करती थीं। इसके लिए उन्हें अनेक कटु आलोचनाएँ भी सुननी पड़ती थी, जुर्माना भी उनको देना पड़ा था, पर अपने स्वभाव से उनको कोई भी विचलित नहीं कर सका। उनके एक स्वजन ने भय एवं घृणा से सिहरते हुए कहा – ''ओह माँ ! छत्तीस जातियों की जूठन उठा रही हो !'' तब माँ ने निर्द्वन्द्व स्वर

से उसे कहा – ''छत्तीस कहाँ? सब तो मेरे हैं।'' माँ ने यथोचित आचरण करके नीरव – नि:शब्द विद्रोह करके दिखाया, ऐसा कहा जा सकता है।

एक वृद्धा की अतीत जीवन का इतिहास मलिन होने के कारण ठाकुर ने उन्हें नहबत में जाने से मना किया। इस पर माँ ने उनकी निषेधाज्ञा को अस्वीकार करते हुए कहा – ''क्यों? अभी तो वह सदा हरि-कथा कहती रहती है।'' – अर्थात् जो पश्चाताप करते हुए अतीत जीवन को त्यागकर अच्छा बनने का प्रयास करे, माँ उसे अवश्य ही ग्रहण करती थीं।

श्रीमाँ ने कहा ''हरीश कुछ दिन कामारपुकुर में आकर रहा। एक दिन मैं बगल के मकान से आ रही थी। आकर जैसे ही मैं घर में घुसी। हरीश वैसे ही मेरे पीछे-पीछे दौड़ते हुए आया। हरीश उस समय पागल था। उसके परिवार ने उसे पागल बना दिया था। उस समय घर में कोई दूसरा नहीं था। मैं कहाँ जाऊँ ! मैं दौड़ती हुई धान की पूँज के चारों ओर घूमने लगी। वह भी किसी तरह से छोड़ने वाला नहीं था। सात बार घूमने के बाद और मुझसे नहीं हो पाया। फिर मैंने अपनी मूर्ति धारण कर ली। उसकी छाती पर चढ़कर घुटने से दबाकर जीभ को खींचकर गालों पर ऐसे तमाचे मारने लगी कि वह हें-हें करते हुए हाँफने लगा।''

श्रीमाँ ने इस विषम परिस्थिति में असुरदमनकारिणी बगलामूर्ति का रूप धारण कर हरीश की कुप्रवृत्ति को कठिन हस्त से दमन किया। आवश्यक हो, तो नारी को रौद्र रूप धारण करना पड़ता है, यही शिक्षा माँ ने दी।

मायावती अद्वैत आश्रम में द्वैत उपासना निषिद्ध थी, फिर भी कुछ भक्तों ने एक कमरे में ठाकुर का चित्र सजाकर सहज-सरल रूप से पूजा प्रारम्भ कर दी थी। स्वामीजी ने एक दिन यह सब देखकर स्वरूपानन्दजी को डाँटा। स्वामी विरजानन्द जी उस मन्दिरवाले कमरे के प्रधान थे। जो भी हो स्वामीजी के मनोभाव को समझकर उनलोगों ने वहाँ पूजा करना बन्द कर दी। बाद में स्वामी विमलानन्द महाराज ने श्रीमाँ को सब कुछ बताकर एक पत्र लिखा। उस पत्र के उत्तर में माँ ने बताया – ''जो हमारे गुरु हैं, वे तो अद्वैत हैं, तुमलोग उन्हीं गुरु के शिष्य हो, इसलिए तुमलोग भी अद्वैतवादी हो।'' इस प्रकार से माँ ने द्वैत-अद्वैत के द्वन्द्व का समाधान कर दिया।

निवेदिता को कई लोग म्लेच्छ, क्रिश्चन आदि कहकर उनसे दूरी बनाया करते थे। लेकिन श्रीमाँ ने ससम्मान उन्हें 'खुकी' अर्थात् बच्ची कहकर स्वीकार किया। एक दिन निवेदिता ने बागबाजार में भोग बनाकर ठाकुर को निवेदन करने के पश्चात् उसे माँ को दिया। निवेदिता का दिया हुआ वह भोग माँ ने ग्रहण करते हुए कहा – ''वह तो मेरी बेटी है, ठाकुर को भोग निवेदन करने का उसे अधिकार है, यदि किसी को कोई आपत्ति है, तो उसे वह अपने आप में ही रखे।''

आज से १०० वर्षों से भी पहले जिसके साथ जैसा आचरण करना चाहिए, वैसा ही करके माँ ने नीरव विप्लव करके दिखाया।

माँ जानती थीं कि दोष तो सभी लोग पकड़ते हैं, किन्तु दोषी को सुधारना और उसकी भलाई करना बहुत कठिन होता है। इसलिए श्रीमाँ का व्यवहार हम सबसे पृथक् है। हमलोग केवल दोष पकड़ते हैं, किन्तु दोषी को सही पथ पर लाने के लिए उसके साथ समुचित व्यवहार नहीं करते हैं। प्रेम द्वारा जगत् को जीता जा सकता है, यह केवल निरर्थक शब्द नहीं हैं, श्रीमाँ ने निरपेक्ष रूप से सबको समान रूप से प्रेम देकर यह प्रमाणित किया है कि क्षमा के अयोग्य कोई भी नहीं होता, सभी से प्रेम किया जा सकता है।

जयरामबाटी की अल्पशिक्षिता गृहवधू होने के पश्चात् भी जीवन के प्रत्येक कर्म एवं आचरण में श्रीमाँ ने किस प्रकार से स्वयं को जीवन्त करके दिखाया, उसके अनेकानेक प्रमाण मिलते हैं। यदि हम उनके जीवन का अनुसंधान करें, तो देखेंगे कि किस प्रकार संसार में रहते हुए भी असंसारी की तरह जीवन यापन किया जा सकता है। तभी जीवन जीने का सही अर्थ ढूँढ़ा जा सकता है। अत: माँ के पास यह प्रार्थना है –

''एइ संसारे डरि कारे, राजा जार माँ महेश्वरी।
(आमि) आनन्दे आनन्दमयीर खास तालुके बास करि।।''

– इस संसार में मैं किससे डरूँ, जिसकी माँ महेश्वरी राजा हैं। मैं आनन्दमयी की विशेष जमींदारी में आनन्द से निवास करता हूँ। ○○○

विलक्षण प्रतिभा

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

राष्ट्रीय बाल पुरस्कार साहसी, उत्साही और कुछ कर गुजरने की ललक रखनेवाले बच्चों को प्रेरणा देने का कार्य करता है। राष्ट्रीय बाल पुरस्कार में प्रधानमन्त्री द्वारा १ लाख रुपया और प्रमाण-पत्र प्रदान किया जाता है। इसके दो भाग हैं, एक बाल शक्ति पुरस्कार और दूसरा बाल कल्याण पुरस्कार। यह छह क्षेत्रों कला, वीरता, संस्कृति, नवाचार, ज्ञानार्जन, समाज-सेवा और खेल में दिया जाता है।

बच्चो आओ ! हम ऐसे ही दो बच्चों के बारे में जानते हैं। एक बच्चे का नाम धृतिष्मान चक्रवर्ती है, जिसकी उम्र ५ वर्ष है और उसका जन्म १६ मार्च २०१६ को शिवसागर, असम में हुआ। धृतिष्मान जब ३ वर्ष का ही था, तब ही उसे youngest multilingual singer का नाम दिया गया। वह ५ अलग-अलग भाषाओं असमिया, संस्कृत, बंगाली, हिन्दी और अंग्रेजी में गाना गा सकता है। उसकी माँ श्रीमती सोनम चक्रवर्ती ने बताया कि जब वह संगीत की कक्षा लेती थी, तब नन्हा धृतिष्मान उनके साथ बैठकर गीत गाने का प्रयास करता तथा गुनगुनाता था। उसे भाषा का ज्ञान नहीं था, रिदम और टोन पसन्द आते ही उसे सुन-सुन कर गाने लगता, चाहे वह कोई भी भाषा क्यों न हो। धृतिष्मान गाने को अच्छे से सुनता, समझता और वैसे ही गाने की कोशिश करता। उसकी गाने के प्रति रुचि देखकर उसकी माँ ने उसका गाना रिकार्ड करना आरम्भ किया। प्रत्येक गीत को वह ५०-५० बार सुनता था। उसकी माँ गीत को कविता के जैसी बना देती थी, जिससे धृतिष्मान को गाने के शब्द जल्दी याद हो जाएँ। वह शास्त्रीय संगीत की शिक्षा लेकर गीत को अधिक अच्छे से गाना चाहता है। वह ट्रम और गिटार बजाना भी सीख गया है। इंडिया बुक ऑफ रिकार्ड-२०२१ में उसे सबसे कम उम्र के बहुभाषी गायक के रूप में उल्लेखित किया गया है। धृतिष्मान को कला और संस्कृति के क्षेत्र में प्रधानमन्त्री राष्ट्रीय बाल पुरस्कार, २०२२ से सम्मानित किया गया।

धृतिष्मान चक्रवर्ती

दूसरा बच्चा सिद्धार्थ शर्मा राजिम (छ.ग.) का रहनेवाला है। इसकी उम्र ६ वर्ष की है। राजिम की वरिष्ठ कवयित्री सुधा शर्मा एवं डायरीकार शरद शर्मा के पोते सिद्धार्थ ने अनवरत सत्ताईस मिनट तक प्रसिद्ध कवियों के काव्यों का पाठ किया, जिसमें लगभग दो हजार चार सौ शब्द थे। उसके इस कृतिमान को इंडिया बुक ऑफ रिकार्ड में दर्ज किया गया। इसके साथ ही साथ इसे एशिया बुक ऑफ रिकॉर्ड में भी दर्ज किया गया। कविता, शतरंज और गणित के त्रिवेणी-संगम सिद्धार्थ शर्मा को उसकी विलक्षण प्रतिभा के कारण इसके पूर्व चंडीगढ़ में आयोजित समारोह में ''द चाइल्ड प्रोजिडी एवार्ड-२०२२'' में अलंकृत किया जा चुका है। चाइल्ड प्रोजिडी संस्था ने उसे विश्व के १०० विलक्षण प्रतिभासम्पन्न बालकों में से एक माना है। सिद्धार्थ को छत्तीसगढ़ प्रांतीय अखण्ड ब्राह्मण समाज, रायपुर के तत्त्वाधान में आयोजित सम्मान समारोह में विलक्षण प्रतिभासम्मपन्न बालक सम्मान-२०२२ से भी समादृत किया गया है। रेलवे भर्ती बोर्ड, बिलासपुर और अन्य मंचों द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन में सिद्धार्थ ने काव्यपाठ किया है। इसके लिए उन्हें प्रतिभावान पठन एवं स्मृति चिह्न से अलंकृत किया गया।

सिद्धार्थ शर्मा

तो बच्चों स्वरों की लयबद्धता, अभ्यास, ध्यान और ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए आप भी अपने जीवन को अनुशासित कर लें, तो आपका बौद्धिक विकास अवश्य होगा और आप यदि स्वामी विवेकानन्द न बन पाये, तो विवेकवान अवश्य ही बन सकते हैं। ○○○

पूजा लीन्ह माँ सारदा

स्वामी रामतत्त्वानन्द

कोउ जननी जगजननी कोउ, कोउ देवी सम जान।
मानहि सेवहि पूजहीं, कोउ धरहीं हिय ध्यान।।
पुरुष भगत सब करहि प्रणामा।
बैठी जननी बन जनु श्यामा।।
भागवान भगत एक आवा।
पूजन हित सामग्री लावा।।
प्रथम कीन्ह पद दण्ड प्रणामा।
जपत जपत शुभ माँ कर नामा।।
पुष्प माल सुन्दर इक लावा।
सह श्रद्धा मातुहि पहिरावा।।
जवा गुलाब श्री चरण चढ़ावा।
फल मिठाई कर भोग लगावा।।
हँस मुख जननी पुलकित देहा।
नैनन नित बरषावहिं नेहा।।
देखहि सकल पलक बिन डोले।
नैन पियत रस मुख नहि बोले।।
लीन्ह मातु कछु भोग मिठाई।
कर प्रसाद पुनि दीन्ह फिराई।।
हो विभोर कर दण्ड प्रणामा।
भगत गयउ सुमिरत माँ नामा।।
कर दण्ड प्रणामा, सुमिरत नामा, गयउ भगत निज गेहा।
अस मातु भवानी, बन वरदानी, वरषावहि नित नेहा।।
कब जप तप गावा, फल अस पावा, जीयत देवहि पूजा।
हो तुम बड़भागी, माँ अनुरागी, तुम सम नहि कोउ दूजा।।
जनम जनम तप कीन्ह तब, पावा शुभ फल आज।
लीन्ह पूजा माँ सारदा, नर तन देवी साज।।

(श्रीमाँ चरितावली से साभार)

हे सारदा माँ ! भक्ति दो

श्रीरामकुमार गौड़, वाराणसी

(तर्ज – मंगलकरनि, कलिमलहरनि तुलसी कथा रघुनाथ की और (श्रीरामचन्द्र कृपालु भज मन ...)

मंगलकरनि भवदुखहरनि माँ प्रभू-लीला सहचरी।
सर्वदा निज सन्तान के प्रति प्रीति-निश्छल-संचरी।।
भवताप से संतप्त जन के लिए माँ चिरशुभकरी।
माँ सारदा की प्रीति निर्मल दिव्य करुणा से भरी।।१।।
हे माँ ! करो अब कृपा तेरी मूर्ति अन्तर में बसे।
मन दिव्य भावारूढ़ होकर मग्न हो सत्-चित्-रसे।।
श्रीचरण में हो भक्ति ऐसी निजानन्द स्वभाव हो।
सबमें तुम्हें ही देख पाऊँ, सहज ऐसा भाव हो।।२।।
माँ ! बस यही अभिलाष श्रीछवि हृदय में साकार हो।
श्रीमूर्ति ममतामयी पर मम प्राण-मन बलिहार हो।।
मन-वचन-कर्म समस्त पर माँ सदा तव अधिकार हो।
इस हृदय-पुर में माँ तुम्हारा सदा मुक्त विहार हो।।३।।
हे माँ ! प्रभू के संग तूने दिव्य लीला जो किया।
प्रभु-पार्षदों-भक्तों सभी को, जो अलौकिक सुख दिया।
उसका सतत् चिन्तन-मनन ही दिव्य-सुख-आगार है।
हे सारदा माँ ! भक्ति दो, जो मनुज जीवन-सार है।।४।।
हे पूतचरिता, जगज्जननी, सारदा माँ ! सार दो।
सन्तान अति आकुल पुकारे, ध्यान तो इस बार दो।।
बस एक ही यह चाह हे माँ भक्ति-रस-संचार दो।
तुम, प्रभु-स्वामीजी, हृदय में बसे, यह उपहार दो।।५।।
हे सारदा माँ ! नारि जीवन की तुम्हीं आदर्श हो।
प्रभुदेव कहते, सारदा तुम ज्ञान का उत्कर्ष हो।।
तुम त्याग-तप-सेवा-तितिक्षा-भक्ति का भण्डार हो।
माँ ! बस यही वरदान दो, संतान विगत विकार हो।।६।।
प्रभुदेव-भक्त गिरीश, अक्षय आदि जो जग में रहे।
बहुकाल जो संसार-सागर प्रबल धारा में बहे।।
माँ ! तुम सभी का परम आश्रय और सम्बल-सार हो।
हे सारदा ! प्रभु-भक्ति दो, जिससे विमल आधार हो।।७।।

आत्मविश्वास से आत्मविकास की ओर

स्वामी गुणदानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है, मानव जाति के समग्र इतिहास में सभी महान् स्त्री-पुरुषों में यदि कोई महान् प्रेरणा सबसे अधिक सशक्त रही है, तो वह है आत्मविश्वास। इस आत्मविश्वास के बल पर महान् उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। ''क्या तुम जानते हो कि तुम्हारी देह के अन्दर कितनी ऊर्जा, कितनी शक्तियाँ कितने प्रकार के बल अब भी छिपे पड़े हैं! ... लाखों वर्षों से मनुष्य पृथ्वी पर है, किन्तु अभी तक उसकी शक्ति का एक अति अल्प अंश ही प्रकाशित हुआ है। अतएव तुम कैसे स्वयं को जबरदस्ती दुर्बल कहते हो? क्योंकि तुम्हारे पीछे है शक्ति और आनन्द का अपार सागर। इस विचार से अपने जीवन को प्रेरित कर डालो, स्वयं को अपनी तेजस्विता, सर्वशक्तिमत्ता और गरिमा के भाव से पूरी तरह भर लो।''

जीवन कठिनाइयों और चुनौतियों से भरा पड़ा है। युवक या वृद्ध, सन्त या पापी सभी को कठिनाइयों तथा चुनौतियों का सामना करने के लिए तत्पर रहना पड़ता है। विपरीत परिस्थितियों से जूझता हुआ व्यक्ति परिस्थितियों को अनुकूल बनाने में लगा रहता है। वह जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहता है और मार्गदर्शन उसे अनुभव प्रदान करता है, उसमें आत्मविश्वास उत्पन्न करता है। ।

अवनि लेखरा

विपरीत परिस्थिति में ऊर्जावान् बने रहना

जीवन में कठिनाइयाँ आती हैं, परन्तु जो विपरीत परिस्थिति में जूझते हुए प्रयत्न करता है और लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अपनी सम्पूर्ण ऊर्जा लगाता है, वह विपरीत परिस्थिति में भी संघर्ष करते हुए सफलता प्राप्त कर सकता है।

ऐसा ही एक उदाहरण है अवनि लेखरा का, जिन्होंने विपरीत परिस्थिति से जूझते हुए, संघर्ष करके अपने लक्ष्य को प्राप्त किया। २०१२ में एक कार दुर्घटना में अवनि लेखरा की रीढ़ की हड्डी में गम्भीर चोट लग गई थी, जिसके कारण उनकी कमर का निचला हिस्सा लकवाग्रस्त हो गया। दुर्घटना के कारण दिव्यांग अवनि के जीवन में उदासीनता और अवसाद ने अपने पैर पसारने शुरू कर दिये। बेटी के जीवन से उदासीनता और अवसाद कम करने के उद्देश्य से पिता प्रवीण लेखरा अवनि को वर्ष २०१५ में जयपुर के जगतपुरा खेल परिसर में निशानेबाजी सिखाने के लिए ले गए। पिता के कहने पर अवनि ने निशानेबाजी सीखना प्रारम्भ किया। उनकी इस पहल का परिणाम टोक्यो पैरालम्पिक में ऐतिहासिक स्वर्ण और कांस्य पदक के रूप में सामने आया।

आत्मविश्वास और साहस

दिव्यांग हुई अवनि को व्हीलचेयर का सहारा लेना पड़ा। लेकिन अपने आत्मविश्वास और साहस के बल पर अवनि ने पैरालम्पिक खेलों में निशानेबाजी में स्वर्ण सहित २ पदक जीतकर साबित कर दिया कि जीवन में कभी भी हार नहीं माननी चाहिए। परिश्रम, लगन और साहस से जीवन में सफलता प्राप्त की जा सकती है। अवनि पहली भारतीय महिला खिलाड़ी बनीं, जिन्होंने २०२० में टोक्यो

में दो पैरालम्पिक पदक – १० मीटर एयर राइफल स्टैंडिंग एसएच१ वर्ग में स्वर्ण तथा उसके बाद ५० मीटर राइफल थ्री पोजीशन स्पर्धा में कांस्य पदक जीतकर इतिहास रच डाला। वे भारत की उन चुनिन्दा खिलाड़ियों में शामिल हो गईं जिन्होंने एक से अधिक पैरालम्पिक पदक जीते हैं।

भारत के पहले ओलंपिक व्यक्तिगत स्वर्ण पदक विजेता निशानेबाज अभिनव बिंद्रा की आत्मकथा 'ए शॉर्ट एट ग्लोरी' पढ़ने के बाद अवनि लेखरा इतनी प्रेरित हुईं कि उन्होंने अपने पहले ही पैरालम्पिक में इतिहास रच दिया। अभिनव बिंद्रा ने शत प्रतिशत प्रयासों से भारत के लिए प्रथम व्यक्तिगत स्वर्ण पदक जीता था। उनकी आत्मकथा से अवनि को प्रेरणा मिली कि वे हमेशा उनकी तरह बनने का प्रयास करेंगी। अवनि लेखरा को २०२१ में भारत के सर्वोच्च खेल रत्न पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया। वर्ष २०२२ में उन्हें पद्मश्री पुरस्कार से भी अलंकृत किया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विपरीत परिस्थिति में जूझने से, संघर्ष करने से आत्मविश्वास प्राप्त होता है। परिश्रम, लगन और साहस से आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में जीवन के अनुभव सहायक होते हैं, जो व्यक्ति को संघर्ष करके प्राप्त होते हैं।

उचित मार्गदर्शन

समाज में विविधता तो रहेगी ही। समाज में विविधता नहीं होने से हम सामाजिक दासता के पथ पर अग्रसर होंगे, जो हमारी प्रगति को अवरुद्ध कर देती है। यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को देखकर उसी की तरह बनने की चाह रखता हो, तो उसे यह जान लेना चाहिए कि क्या उसका वैसा स्वभाव है या नहीं। वह उस जैसा बन जाने की चाह तो रख पाता है, परन्तु सफल नहीं हो पाता। अत: उसे यह अनुभव करना चाहिए कि हर व्यक्ति की अपनी प्रतिभा तथा जीवनधारा होती है। जब व्यक्ति अपनी जीवनधारा में अन्य लोगों से भिन्न अपनी प्रतिभा के अनुसार स्वयं को सशक्त बनाएगा, तो वह विविधता का ही सहयोगी होगा। शेष स्वत: ही अच्छा हो जाएगा।

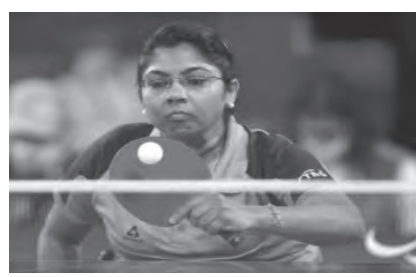
भाविना हसमुखभाई पटेल

पैरा टेबल टेनिस खिलाड़ी भाविना हसमुखभाई पटेल ने स्वयं को सशक्त बनाकर अपने जीवन की दुर्बलताओं को दृढ़ता से पराभूत किया। भाविना को १२ महीने की आयु में पोलियो हो गया था। शारीरिक दिव्यांगता के कारण उन्हें एक साक्षात्कार के लिए अस्वीकार कर दिया गया था। उसके बाद उनका झुकाव टेबल टेनिस खेल की ओर बढ़ने लगा। कम आयु से ही व्हीलचेयर तक सीमित भाविना ने २००४ में ब्लाइंड पीपुल्स एसोसिएशन, अहमदाबाद में प्रवेश लिया, वहाँ कम्प्यूटर में एक कोर्स किया और पत्राचार के माध्यम से स्नातक की पढ़ाई भी की। स्नातक की पढ़ाई के दौरान वह खेलों में बहुत सक्रिय थीं। कोच तेजलबेन लाखिया ने भाविना की रुचि देखकर कोच ललन दोशियो से उनका सम्पर्क करवाया। ब्लाइंड पीपुल्स एसोसिएशन, अहमदाबाद में भाविना कोच तेजलबेन लाखिया एवं ललन दोशीयो के मार्गदर्शन से फिटनेस के लिए शारीरिक गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रेरित हुईं।

पैरा टेबल टेनिस खिलाड़ी भाविना पटेल ने विश्व चैंपियनशिप सहित २८ अन्तर्राष्ट्रीय स्पर्धाओं में भारत के लिए कई स्वर्ण, रजत और कांस्य पदक जीते हैं। भाविना ने २०११ में अपना पहला पदक, २०१३ में एशियाई क्षेत्रीय चैम्पियनशिप में भारत का पहला ऐतिहासिक रजत पदक जीता था। भाविना पटेल ने इस वर्ष अगस्त २०२२ में बर्मिंघम राष्ट्रमण्डल खेलों में महिला एकल वर्ग में स्वर्ण पदक जीता।

भाविना पटेल २६ अगस्त २०२१ को महिला एकल वर्ग में सर्बिया की विश्व की ५ नंबर की बोरिसलावा पेरिक रैंकोविक को हराकर २०२० टोक्यो पैरालम्पिक में पदक प्राप्त करनेवाली प्रथम भारतीय बनीं।

कोच के उचित मार्गदर्शन से भाविना टेबल टेनिस खिलाड़ी के रूप में उभरीं। लाखिया और दोशीयो ने ही उन्हें फिटनेस के लिए शारीरिक गतिविधियों में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। भाविना की सफलता का श्रेय उनके कोच ललन दोशियो एवं तेजलबेन लाखिया को जाता है।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है – ''दुर्बलता का उपचार सदैव उसका चिन्तन करते रहना नहीं है, वरन् बल का चिन्तन करना है। मनुष्य में जो शक्ति पहले से ही विद्यमान

है, उसे उसकी याद दिला दो। तभी वह आत्मविश्वास की उपस्थिति का अनुभव कर सकता है, जो उसे आगे बढ़ने में तथा उसके विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अत: स्वयं को दुर्बल नहीं मानना चाहिए।

दृढ़ निश्चय और आत्मबल

युवाओं को जीवन में कभी हार नहीं माननी चाहिए। अपने दृढ़ निश्चय और आत्मविश्वास के बल पर सदैव आगे बढ़ा जा सकता है। ऐसा ही एक उदाहरण है उत्तर प्रदेश कैडर के २००७ बैच के आईएएस अधिकारी तथा पैरा-बैडमिंटन खिलाड़ी – सुहास यथिराज।

सुहास यथिराज का दाहिना पाँव जन्म से ही पोलियो से ग्रस्त था। उन्होंने कभी भी इस कमजोरी को स्वयं पर प्रहावी नहीं होने दिया। वे अपने अत्मविश्वास और दृढ़-निश्चय के बल पर यूपीएससी-२००६ की परीक्षा पास कर आईएएस बने और साथ ही उन्होंने बैंडमिंटन खेल में भी निपुणता प्राप्त की।

लालिनाकेरे सुहास यथिराज

सुहास यथिराज पहले आईएएस हैं, जिन्होंने टोक्यो पैरालम्पिक-२०२० में रजत पदक जीतकर सभी भारतीयों को गौरवान्वित कर इतिहास रच डाला। वे वर्तमान में उत्तर प्रदेश राज्य के गौतमबुद्धनगर-नोएडा के डीएम भी हैं, उन्होंने कई चुनौतियों का सामना करते हुए यह सफलता प्राप्त की। यूपीएससी-२००६ की परीक्षा में सुहास को ३८२वां रैंक प्राप्त हुआ और २००७ में वे भारत के पहले विशेष रूप से दिव्यांग आईएएस अधिकारी बने।

केरल के मूल निवासी लालिनाकेरे सुहास यथिराज का जन्म २ जुलाई, १९८३ में हुआ। प्रारम्भिक शिक्षा कर्नाटक के हसन जिले के पास डूड्डा में होने के बाद उनकी आगे की पढ़ाई (माध्यमिक शिक्षा) डीवीएस स्वतंत्र कॉलेज, शिवमोग्गा से हुई। उन्होंने वर्ष २००४ में राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, सुरथकल से कंप्यूटर साइंस इंजीनियरिंग में प्रथम श्रेणी में स्नातक की डिग्री प्राप्त की।

सुहास यथिराज की उपलब्धियाँ और पुरस्कार निम्नलिखित हैं – उत्तर प्रदेश सरकार ने उन्हें यश भारती पुरस्कार से पुरस्कृत किया है। इसके साथ ही दिसम्बर २०१६ में 'वर्ल्ड डिसेबिलिटी डे' के अवसर पर उन्हें स्टेट का बेस्ट पैरा स्पोर्ट्स पर्सन पुरस्कार दिया गया था।

सुहास यथिराज ने पैरालम्पिक एशियन गेम्स, इंडोनेशिया (जकार्ता)-२०१८ में पुरुष एकल कांस्य पदक, पैरा बैडमिंटन चैंपियनशिप (वाराणसी)-२०१८ में पुरुष एकल स्वर्ण पदक, पैरा बैडमिंटन चैंपियनशिप (तुर्की/अंताल्या)-२०१८ में पुरुष एकल रजत पदक, पैरा बैडमिंटन चैंपियनशिप (कम्पाला/यूगांडा)-२०१९ में पुरुष एकल कांस्य पदक जीता। पैरा बैडमिंटन चैंपियनशिप (आयरलैंड)-२०१९ में पुरुष एकल रजत पदक, पैरा बैडमिंटन चैंपियनशिप (थाईलैंड/बैंकाक)-२०१९ में पुरुष एकल मे कांस्य पदक जीता।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है – मनुष्य-मनुष्य के बीच जो भेद है, वह केवल आत्मविश्वास की उपस्थिति अथवा अभाव के कारण ही है। मनुष्य में दुर्बलताएँ हैं, परन्तु उन्हीं पर चिन्तन करते मत रहो, आगे बढ़ो और विकास करो, क्योंकि सदैव अपनी दुर्बलताओं पर चिन्तन करने से कोई लाभ नहीं होगा। शक्ति प्राप्त करो, पर शक्ति सदैव दुर्बलताओं पर चिन्तन करने से नहीं आती, वरन् उसमें पहले से ही विद्यमान सम्भाव्यता की अभिव्यक्ति से मनुष्य अपनी शक्ति को जाग्रत कर सकता है।

सुहास यथिराज ने भी अपने जीवन में सफलता और उपलब्धियों को प्राप्त करके यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य अपनी सम्भाव्यता की अभिव्यक्ति से कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी आगे बढ़ सकता और आत्मविकास कर सकता है।

उपसंहार

व्यक्ति अपने स्वभाव को अर्थात् स्वयं की प्रकृति को अभिव्यक्त करने के लिए स्वतंत्र है। अपने स्वभाव के अनुसार वह अपनी प्रतिभा का विकास कर सकता है। अत: हमें समस्याओं तथा चुनौतियों का सामना करने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। विपरीत परिस्थिति को अनुकूल बनाने में तथा जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए परिश्रम, लगन, तथा आत्मविश्वास की अवश्यकता है। जो व्यक्ति संघर्षों से जूझता है और उनका सामना करता है, वह आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में सफल होता है तथा आत्मविकास की ओर अग्रसर होता है। ○○○

गीतातत्त्व-चिन्तन (१०)

ग्यारहवाँ अध्याय

स्वामी आत्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक सचिव थे। उनका 'गीतातत्त्व-चिन्तन' भाग-१ और २, अध्याय १ से ६वें तक पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है और लोकप्रिय है। ८वाँ अध्याय 'विवेक ज्योति' के सितम्बर, २०१६ से नवम्बर, २०१७ अंक तक प्रकाशित हुआ था। अब प्रस्तुत है ११वाँ अध्याय, जिसका सम्पादन ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी ने किया है। – सं.)

ईश्वर का कालरूप

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः
समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति।
तथा तवामी नरलोकवीरा
विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति।।२८।।
यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतंगा
विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
तथैव नाशाय विशन्ति लोका
स्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः।।२९।।
लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ता
ल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः।
तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं
भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो।।३०।।
आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो
नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद।
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यं
न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम्।।३१।।

यथा नदीनाम् बहवः अम्बुवेगाः (जैसे समस्त नदियों का जलप्रवाह) समुद्रम् एव अभिमुखाः द्रवन्ति (समुद्र की ही ओर बहता है) तथा अमी नरलोकवीराः (वैसे ही ये योद्धागण) तव अभिविज्वलन्ति वक्त्राणि विशन्ति (आपके प्रज्वलित मुखों में प्रवेश कर रहे हैं) यथा पतंगाः नाशाय (जैसे पतिंगे मरने के लिए) प्रदीप्तम् ज्वलनम् समृद्धवेगाः विशन्ति (प्रज्वलित अग्नि में हठात् प्रवेश करते हैं) तथा एव लोकाः अपि नाशाय (वैसे ही ये लोग भी अपने नाश हेतु) तव वक्त्राणि समृद्धवेगाः विशन्ति (आपके मुखों में हठात् प्रवेश कर रहे हैं)।

''जैसे समस्त नदियों का जलप्रवाह समुद्र की ही ओर बहता है, वैसे ही ये योद्धागण आपके प्रज्वलित मुखों में प्रवेश कर रहे हैं।''

''जैसे पतिंगे मरने के लिए प्रज्वलित अग्नि में हठात् प्रवेश करते हैं, वैसे ही ये लोग भी अपने नाश हेतु आपके मुखों में हठात् प्रवेश कर रहे हैं।''

विष्णो (हे विष्णो!) समग्रान लोकान् ज्वलद्भिः वदनैः (आप सम्पूर्ण लोकों को प्रज्वलित मुखों द्वारा) ग्रसमानः लेलिह्यसे (ग्रसते हुए सब ओर से चाट रहे हैं) तव उग्राः भासः समग्रम् जगत् (आपका उग्र प्रकाश सम्पूर्ण जगत को) तेजोभिः आपूर्य प्रतपन्ति (तेज से परिपूर्ण करके तपा रहा है) देववर (हे देवों में श्रेष्ठ !) मे आख्याहि (मुझे कहिए) भवान् उग्ररूपः कः (आप उग्र रूपवाले कौन हैं?) ते नमः अस्तु प्रसीद (आपको नमस्कार हो, आप प्रसन्न होइए) आद्यम् भवन्तम् विज्ञातुम् इच्छामि (आदिपुरुष! आपको मैं विशेष रूप से जानना चाहता हूँ) हि तव प्रवृत्तिम् न प्रजानामि (क्योंकि आपकी प्रवृत्ति को नहीं जानता)।

''हे विष्णो ! आप सम्पूर्ण लोकों को प्रज्वलित मुखों द्वारा ग्रसते हुए सब ओर से चाट रहे हैं। आपका उग्र प्रकाश सम्पूर्ण जगत को तेज से परिपूर्ण करके तपा रहा है।''

''हे देवों में श्रेष्ठ ! मुझे कहिए आप उग्र रूपवाले कौन हैं? आपको नमस्कार हो, आप प्रसन्न होइए, हे आदिपुरुष! आपको मैं विशेष रूप से जानना चाहता हूँ क्योंकि मैं आपकी प्रवृत्ति को नहीं जानता।''

नदी का जल सागर के जल में समाकर उसके साथ एकरूप हो जाता है, नष्ट नहीं होता। यह उपमा तो अर्जुन ने सत्कर्मी राजाओं के लिए दी और दुष्ट राजाओं, योद्धाओं

के लिए पतिंगों की उपमा दी, जो जलते दीये में जाकर नष्ट हो जाते हैं। अर्जुन कहता है – प्रभो ! आप उस सम्पूर्ण लोकों को प्रज्वलित मुखों द्वारा ग्रास करते हुए सब ओर से बार-बार चाट रहे हैं। आपका उग्र प्रकाश सम्पूर्ण जगत् को तेज के द्वारा परिपूर्ण करके तपा रहा है। इस बीभत्स दृश्य को देखकर मैं सिहर उठता हूँ।

अन्त में अर्जुन कहता है – मुझे बताइए कि उग्र रूपवाले आप कौन हैं? हे देवों में श्रेष्ठ ! आपको नमस्कार हो। हे आदिपुरुष ! आप प्रसन्न होइए। मैं आपको विशेष रूप से जानना चाहता हूँ, क्योंकि मैं आपकी प्रवृत्ति को नहीं जानता। अर्जुन के कहने पर ही तो भगवान ने अपना विराट्रूप दिखाया। तब क्या अर्जुन इस बात को भूल भी गया और उनसे पूछ रहा है कि वे कौन हैं? इस बात का एक उत्तर तो यह हो सकता है कि कहाँ तो अर्जुन ने कृष्ण को मानव के रूप में, सखा के रूप में देखा था और अब उनके इस अति भयंकर रूप को देख रहा है, जिसकी कल्पना भी उसने नहीं की थी। वैसे तो अर्जुन भगवान को देववर ! विष्णु आदि कहकर सम्बोधित कर रहा है। अर्थात् यह भी जान रहा है कि वे कृष्ण हैं। परन्तु अर्जुन के इस कथन का भाव यह है कि – मैं जानता हूँ कि आप कृष्ण हैं, विष्णु के अवतार हैं और इस समय मुझे अपना दिव्यरूप दिखा रहे हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि आप पालनकर्ता हैं, पर यहाँ तो आपका संहारक रूप देख रहा हूँ। इसीलिए पूछ रहा हूँ कि आप कौन हैं?

भगवान से अर्जुन का दूसरा प्रश्न है – आपका स्वभाव कैसा है? आपकी प्रवृत्ति क्या है? आप इस रूप में क्यों आए हैं? इस रूप को धारण करने के पीछे आपका क्या प्रयोजन है? इस प्रश्न का अर्थ यह नहीं कि वह भगवान को जानता नहीं है। वास्तव में वह घबरा गया है, थोड़ा व्यथित है। इसीलिए उसके मन में बार-बार यह शंका उठती है कि भगवान विष्णु तो पालनकर्ता हैं, तब उनका ऐसा संहारकरूप कैसे हो सकता है? अर्जुन भगवान के प्रारम्भिक रूप को जानना चाहता है। इन प्रश्नों के उत्तर में भगवान कहते हैं – मैं विष्णु ही हूँ, पर इस समय कालरूप में दिखाई दे रहा हूँ। यह मेरा महाकालरूप है। लोक के क्षय की कामना से मैंने यह रूप धारण किया है।

श्रीभगवान उवाच

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः।।३२।।

श्रीभगवान उवाच (श्रीभगवान बोले) लोकक्षयकृत् प्रवृद्धः कालः अस्मि (मैं लोकों का नाश करनेवाला बढ़ा हुआ महाकाल हूँ) इह लोकान् समाहर्तुम् प्रवृत्तः (इस समय लोकों को नष्ट करने हेतु प्रवृत्त हुआ हूँ) ये प्रत्यनीकेषु अवस्थिताः योधाः (जो प्रतिपक्षियों की सेना में स्थित योद्धागण हैं) सर्वे त्वाम् ऋते अपि न भविष्यन्ति (वे सब तेरे बिना भी नहीं रहेंगे)।

''मैं लोकों का नाश करनेवाला बढ़ा हुआ महाकाल हूँ, इस समय लोकों को नष्ट करने हेतु प्रवृत्त हुआ हूँ, जो प्रतिपक्षियों की सेना में स्थित योद्धागण हैं, वे सब तेरे बिना भी नहीं रहेंगे।''

श्रीभगवान बोले, मैं लोकों का नाश करनेवाला बढ़ा हुआ महाकाल हूँ। इन समस्त लोकों का समाहरण करना उन्हें अपने में विलीन कर लेना, मेरा उद्देश्य है। भगवान का बड़ा अद्भुत उत्तर है। कालरूप बनकर आए हैं। दसवाँ अध्याय जो विभूतियोग है, उसमें भी **कालः कलयतामहम्** बताया था। जो गणना करनेवाले तत्त्व हैं, उनमें मैं काल नाम का तत्त्व हूँ। काल के समान सटीक गणना करनेवाला और कोई तत्त्व नहीं है। भगवान का कहना है कि जैसे मेरे हिसाब में कभी कोई भूल नहीं होती, उसी प्रकार मेरे रूप इस काल के हिसाब में भी कभी कोई भूल नहीं होती। जिसका काल उपस्थित हुआ है, वह तुरन्त आकर मुझमें मिल जाएगा। यही बात भगवान इस श्लोक के माध्यम से बताना चाहते हैं। कहते हैं – प्रतिपक्षियों की सेना में स्थित जो योद्धा लोग हैं, वे तेरे बिना भी नहीं रहेंगे। तू यदि सोचता है कि मैं इनको मारने का निमित्त क्यों बनूँ? तो वे तो मेरे द्वारा मारे भी जा चुके हैं और यह तू मेरे शरीर में देख चुका है।

शत्रु योद्धागण स्वयं मृत

हम पहले देख चुके हैं कि भौतिक जगत् में जो स्थूल घटनाएँ होती हैं, उनका कारण सूक्ष्म-जगत् में पहले से उपस्थित हो जाता है। जैसे जब व्यक्ति कोई कार्य करना चाहता है, तो पहले उसकी योजना विचार में बनाता है। फिर धीरे-धीरे उस विचार को कार्य में परिणत करता है। जो कार्य अभी रूपायित हुआ दिखाई देता है, वह बहुत पहले सूक्ष्म रूप से जन्म ले चुका होता है। मान लीजिए हमें एक मन्दिर बनाना है, तो सबसे पहले हमारे मन में मन्दिर

बनाने की योजना बनी। उस योजना को रूपायित करने का हम तरह-तरह से प्रयास करते हैं। मन्दिर की रूपरेखा कागज पर बनाते हैं। उस नक्शे के आधार पर मन्दिर का मॉडल तैयार करते हैं। उसके बाद मन्दिर बनता है। तात्पर्य यह है कि स्थूल जगत् में जो मन्दिर दिखाई देता है, वह सूक्ष्म-जगत् में पहले से ही बनकर तैयार हो गया होता है। भगवान के दिये दिव्य चक्षु अर्जुन को इसी सूक्ष्म-जगत् के दृश्य देखने और घटनाओं को समझने में समर्थ बनाते हैं। जो कारण बाद में कार्य निष्पन्न करेंगे, भिन्न-भिन्न दृश्यों के रूप में दिखाई देंगे, वे सूक्ष्म-जगत् में पहले से ही रहते हैं। भगवान पहले ही अर्जुन से कह चुके हैं कि अर्जुन यदि निमित्त न भी बनना चाहे, तो भी समस्त योद्धा तो स्वयं मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं। भगवान कहते हैं –

भगवान ही विश्व के कर्ता

अर्जुन को निमित्त बनने का उपदेश

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व
जित्वा शत्रून् भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्।
मयैवैते निहताः पूर्वमेव
निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।।३३।।

तस्मात् त्वम् उत्तिष्ठ (इसलिए तू उठ !) यशः लभस्व (यश प्राप्तकर) शत्रून् जित्वा (और शत्रुओं को जीतकर) समृद्धम् राज्यम् भुङ्क्ष्व (धन-धान्य से सम्पन्न राज्य का भोग करो) एते पूर्वम् एव मया निहताः (ये सब शूर-वीर पहले से ही मेरे ही द्वारा मारे जा चुके हैं) सव्यसाचिन् निमित्तमात्रम् एव भव (हे सव्यसाची ! तू तो केवल निमित्तमात्र बन जा)।

''इसलिए तू उठ ! यश प्राप्त कर और शत्रुओं को जीतकर धन-धान्य से सम्पन्न राज्य का भोग कर। ये सब शूर-वीर पहले से ही मेरे द्वारा ही मारे जा चुके हैं। हे सव्यसाची ! तू तो केवल निमित्तमात्र बन जा।''

इसलिए हे अर्जुन ! उठ ! यश प्राप्त कर और शत्रुओं को जीतकर धन-धान्य से सम्पन्न राज्य का भोग कर। ये सब शूर-वीर पहले से ही मेरे द्वारा मारे जा चुके हैं। हे सव्यसाची ! तू तो केवल निमित्त मात्र बन जा। इस संसार में सब कुछ भगवान के द्वारा पहले ही किया जा चुका है। हम तो केवल भगवान की कृपा को पकड़ने की कोशिश करते हैं। जैसे यहाँ रायपुर आने से पहले मैं वसिष्ठ गुफा में स्वामी पुरुषोत्तमानन्द जी महाराज के समीप रहा। जब मैं यहाँ कार्य करने के लिए आना चाहता था, तब उनका आशीर्वाद लेने गया था। मुझे आशीर्वाद देते हुए वे बोले – बेटा ! जाओ, देखोगे, सब कुछ पहले ही हो चुका है। ठाकुर श्रीरामकृष्ण देव ने सब कुछ पहले से ही ठीक कर के रखा है। जो लोग तुम्हारे कार्य में तुम्हें सहायता देंगे, वे भी उनके द्वारा नियुक्त किए जा चुके हैं। तुम्हें तो खोजना भर है कि नियुक्त किए वे लोग कौन हैं? यही तुम्हारा कार्य रहेगा। इसी आशय की बात यहाँ भगवान भी कह रहे हैं – अर्जुन ! ये सब तो मारे ही जा चुके हैं। यह जो युद्ध है, इसका निर्णय पहले ही हो चुका है। तुम्हें तो केवल निमित्त बनना है। केवल महाभारत युद्ध का ही निर्णय अर्जुन के लिए भगवान के दिव्य-शरीर में नहीं हुआ; इस संसार के सब कुछ का निर्णय उनके शरीर में पहले ही हो चुका है। हम आविष्कार मात्र करते हैं। मनुष्य यदि ऐसा सोचने लगे कि मैंने कुछ नहीं किया, मैं तो केवल निमित्त बना हूँ, उस कर्म का जो भगवान ने पहले से ही करके रखा था। जो काम भगवान के द्वारा पहले ही किया जा चुका है, मैं तो उसका केवल आविष्कार भर कर सकता हूँ। ऐसा भाव मन में आ जाए, तो मनुष्य अहंकार से पीड़ित नहीं होता। इस तथ्य को जब तक मनुष्य जानता नहीं, तब तक जरा-सा काम करते ही उसके मन में अहंकार आने लगता है और धीरे-धीरे वह भगवान से कटकर दूर निकल जाता है और अपने अहंकार से ही वह मारा जाता है। **(क्रमशः)**

कविता

सारदा अम्ब तुम्हें प्रणाम

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा

परम भाव की सदा स्वामिनी, ज्ञान-भक्ति की अनुपम धाम।
सकल विश्वकल्याणरता हे, सारदा अम्ब तुम्हें प्रणाम।।
भवरोगों की क्लेशहारिणी, भक्तहृदय में विराजमान।
मातृशक्ति की नित्यस्वरूपिणी, पावनता की हो अभिधान।।
शुभ्रकान्ति से सदा युक्त माँ, रामकृष्णगत तेरे प्रान।
करुणापूरित कमलनयन तव, करता दुःख-ताप अवसान।।
जगतबन्ध की तुम्हीं काटती, शान्ति सुधा देती अविराम।
भक्तजनों की विपद्नाशिनी, योगेश्वरि तुम सब सुखधाम।।
योगेश्वर श्रीरामकृष्ण के कार्यसिद्धि की तुम्हीं प्रमान।
नित्य भगवती शान्तिस्वरूपिणी, तुम ही अखिल विश्व वरदान।।
विश्ववन्दिता सुगुणभूषिता, माँ तुम ही वेदों की गान।
सकल शक्ति अवतार स्वरूपा, मोक्षदायिनी परम महान।।

श्रीमाँ सारदा देवी जयन्ती विशेष

जप-साधिका माँ सारदा

रीता घोष, बैंगलुरु

शास्त्रों में ईश्वर की पूजा के कई रूपों का वर्णन मिलता है, जिसमें पहला है औपचारिक पूजा। औपचारिक पूजा में भगवान की मूर्ति या प्रतीक को सामने रखकर पूजा की जाती है और दूसरी विधि है – प्रार्थना और जप। प्रार्थना और जप को पूजा की श्रेष्ठ विधि मानी जाता है। इसमें भक्त प्रार्थना करता है और मन्त्रोच्चारण के साथ अपने हृदय में इष्टमूर्ति का ध्यान करता है। मन के सूक्ष्म होने के साथ-साथ पूजा की विधि उच्चतर होने लगती है। इस प्रकार जप करते हुए भी मन में ध्यान की प्रक्रिया होने लगती है, भक्त का लगाव इष्ट से होने लगता है। योगसूत्र में कहा भी गया है – **स्वाध्यायाद् इष्टदेवतासंप्रयोगः।**

मंत्र के जप करने से इष्टदेवता की अनुभूति होने लगती है, इसीलिये श्रीमाँ सारदा जप के लिये सदा भक्तों और सन्तानों को प्रेरित किया करती थीं। वे कहतीं ''साधन-भजन, तीर्थ-दर्शन, अर्थोपार्जन, चाहे जो बोलो सब काम कम उम्र में कर लेना चाहिए। बुढ़ापे में कफ-श्लेष से भरे शरीर में शक्ति नहीं होती, मन में बल नहीं होता, तब क्या कोई काम हो सकता है? ये यहाँ के लड़के सब कम उम्र में भगवान में मन लगा रहे हैं, यह ठीक हो रहा है। ठीक समय हो रहा है। बेटा, चाहे साधन कहो या भजन कहो, सब अभी इसी उम्र में कर लेना, बाद में क्या हो पाता है? जो कुछ कर सकते हो, वह अभी ही।''

तुलसीदासजी श्रीरामचरित-मानस में जप के विषय में कहते हैं –

जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ।
नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ।।
साधक नाम जपहिं लय लाएँ।
होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।। १/२१/३-४

– जो परमात्मा के गूढ़ रहस्य को जानना चाहते हैं, वे भी नाम को जीभ से जपकर उसे जान लेते हैं। साधक लौ लगाकर नाम का जप करते हैं और अणिमादि सिद्धियों को पाकर सिद्ध हो जाते हैं।

जप और साधन-तत्त्व – जपात् सिद्धि

श्रीमाँ कहती हैं – ''सब समय घड़ी के काँटे के समान इष्ट-मन्त्र का जप करना।

''रोज यदि पन्द्रह-बीस हजार जप कर सके तो मन स्थिर अवश्य होगा। मैंने देखा है कृष्णलाल ! यथार्थ में होता है। पहले करे, यदि न हो तो तब कहे। पर जरा मन लगाकर करना होगा। वह तो कोई करेगा नहीं, केवल यही कहता रहेगा कि मन स्थिर नहीं होता।

''जप से सिद्धि-लाभ होता है। जप करते-करते मनुष्य सिद्ध होता है – जपात् सिद्धि।...निःशब्द रूप से जप करते रहने से हृदय में शक्ति संचालित होती है एवं समय के साथ यह भाव घनीभूत होकर इष्ट का रूप ले लेती है, फिर इष्ट का दर्शन होता है – जपात् सिद्धि, जपात् सिद्धि, जपात् सिद्धि।

''...कुण्डलिनी धीरे-धीरे जागती है, भगवान का नाम जपते रहने से सब हो जाएगा, मन के स्थिर न होने पर भी तो बैठे-बैठे उनके नाम का लाखों जप किया जा सकता है। कुण्डलिनी जागने से पहले अनाहत ध्वनि सुनाई पड़ती है, पर जगदम्बा की कृपा न होने पर यह नहीं होता।''

नाम-जप का प्रथम सोपान है गुरु से मन्त्र ग्रहण करना। मन्त्र लेने की आवश्यकता क्यों है? क्योंकि मन्त्र न लेकर यदि कोई अपनी इच्छानुसार नाम से भगवान को पुकारता है, तो नहीं होगा। माँ के इस कथन पर जब स्वामी अरूपानन्द जी ने 'क्यों?' प्रश्न किया, तब माँ ने कहा – ''मन्त्र लिए बिना देह की शुद्धि नहीं होती। अन्ततः देह-शुद्धि के लिए भी मन्त्र लेना चाहिए।'' 'जो मन्त्र तुम्हें मिला है, उसे

बारम्बार स्मरण करने का अभ्यास करो, उस पर ध्यान करो, अच्छी संगत रखो और अहंकार का त्याग करो – तत्रस्थितौ यत्नोऽभ्यास: – बहिर्मुखी चंचल मन को अन्तर्मुखी करके आत्मस्थ होने का अभ्यास करो। (योगशास्त्र)

कोआलपाड़ आश्रम की बात है, एक बार स्वामी अरूपानन्द जी वटवृक्ष का एक अत्यन्त सूक्ष्म बीज लाकर श्रीमाँ को दिखाकर कहते हैं – ''देखिए माँ, इतना छोटा-सा बीज है, परन्तु इससे ही इतना बड़ा वृक्ष उत्पन्न होता है।'' इस पर श्रीमाँ ने कहा – ''क्यों नहीं? भगवान के नाम का बीज कितना-सा है, पर समय आने पर उसी से भाव-भक्ति और प्रेम कितना कुछ उत्पन्न होता है।'' भगवान का नाम, भगवान जैसा ही पवित्र तथा अनन्त शक्तिदायक होता है। यह नाम शाश्वत होता है। श्रीरामकृष्ण देव ने भी कहा है – ''नाम और नामी एक ही है।'' तुलसीदासजी कहते हैं –

समुझत सरिस नाम अरु नामी।
प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी।।
नाम रूप दुइ ईश उपाधी।
अकथ अनादि सुसामुझि साधी।। १/२०/१-२

समझने में नाम और नामी दोनों एक-से हैं। नाम के पीछे नामी चलते हैं। नाम और रूप दोनों ईश्वर की उपाधि हैं, दोनों अनिर्वचनीय हैं, अनादि हैं और सुन्दर (शुद्ध भक्ति युक्त) बुद्धि से ही इनका स्वरूप जानने में आता है।

स्वयं नित्य सिद्ध साधिका होते हुए भी श्रीमाँ सारदा ने अपना सम्पूर्ण जीवन एक तपस्विनी जैसा यापन किया।

जपहिं नामु जन आरत भारी।
मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।। १/२१/५

अत्यन्त उच्च आधार-सम्पन्न अठारहवर्षीय सारदा, पति संदर्शन हेतु दक्षिणेश्वर आई। दक्षिणेश्वर आने के मात्र कई महीने पश्चात् ही ज्येष्ठ अमावस्या फलहारिणी पूजा के दिन सारदा देवी को पूजा-वेदी पर बैठाकर मातृभाव से षोडशी जगन्माता के रूप में श्रीठाकुर ने उनकी पूजा की और अपनी सम्पूर्ण साधना का फल उन्हें अपर्ण करते हुए उनमें अन्तर्निहित अनादि अनन्त मातृशक्ति को जाग्रत किया।

दक्षिणेश्वर का वह नहबतखाना, जिसमें ठीक से पैर फैलाकर सोने की भी जगह नहीं थी, वहाँ माँ सारदा का सम्पूर्ण कर्म-जगत विराजता था। श्रीठाकुर और उनकी भक्त-संतानों की सेवा में माँ दिनभर अक्लान्त परिश्रम किया करती थीं। ठाकुर और सभी भक्तों के लिये मन पसन्द भोजन तैयार करना, साथ ही ठाकुर के स्त्री-भक्तों का आना-जाना एवं माँ के पास ठहरना आदि लगा ही रहता था। पर दिनभर की इतनी कर्मव्यस्तता एवं कठिन परिश्रम के साथ-साथ ही माँ की जप-ध्यान की साधना चलती रहती थी। कुछ भी हो जाए, पर रात्रि के ३ बजे उठकर स्नान आदि नित्य कर्मों के पश्चात् नहबतखाने के सीढ़ियों पर बैठकर माँ एकाग्रचित्त होकर ध्यान में खो जाती थीं। दक्षिणेश्वर के उन दिनों के बारे में बताते हुए माँ ने अपने शब्दों में कहा है – ''आलस्य छोड़कर नियमित जप-ध्यान करना चाहिए। दक्षिणेश्वर में रहते समय सुबह तीन बजे उठकर मैं जप-ध्यान करती थी। एक दिन अस्वस्थता अनुभव हुई और मैं देर से उठी। दूसरे दिन आलस्य के कारण मैं और देर से उठी। धीरे-धीरे मुझे सुबह जल्दी उठने की इच्छा ही नहीं होती थी। तब मैंने सोचा – अरे ! मैं तो अन्त में आलस्य की शिकार हो गई। उसके बाद से मैं बाध्य होकर उठने लगी और धीरे-धीरे अब सब कुछ पहले जैसा चलने लगा। ऐसे विषयों में दृढ़ संकल्पों के साथ अभ्यास करते रहना चाहिए।''

अपने सभी कर्त्तव्य कर्मों को करते हुए भी माँ सारदा निरन्तर जप किया करती थीं। एक बार अपनी भतीजी से श्रीमाँ ने कहा – ''मैं जब तुम्हारे उम्र की थी, तब कितना काम किया करती थी। ... इतना सब करके भी प्रतिदिन एक लाख जप किया करती थी। जप-ध्यान किये बिना कैसे चलेगा, यह सब तो करना ही है।''

जप के प्रति माँ की असाधारण आस्था थी। उद्बोधन में रहते हुए एक बार सन्ध्या के पश्चात् अपनी भतीजी राधू-माकू आदि को अन्य बातों में उलझे हुए देखकर श्रीमाँ ने अत्यन्त असन्तुष्ट होकर कहा, ''कम से कम सुबह-शाम सभी कार्यों को छोड़कर जप आदि अवश्य करना चाहिए।''

अपने 'आचार्य देव' नामक ग्रंथ में निवेदिता ने माँ के उस समय की दिनचर्या का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया है। ग्रीष्मकालीन दोपहर का समय निवेदिता प्राय: माँ के उद्बोधन के कमरे में व्यतीत करती थी। क्योंकि श्रीमाँ का कमरा अत्यन्त शीतल एवं शान्त रहता था। ऐसे समय में निवेदिता को श्रीमाँ को समीप से देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। वे लिखती हैं – श्रीमाँ के आवास में बड़ी शान्ति विराजती थी। प्रत्युषकाल से पूर्व ही सभी महिलाएँ शय्या परित्याग

कर उठ जाती थीं। चटाई पर से चादर, तकिया आदि हटा दिया जाता था। फिर उस पर सभी स्थिर बैठ जातीं और दीवार की ओर मुँह फेरकर हाथ में माला लिए जप करने लगतीं। इसी प्रकार सन्ध्या समय सभी पट-विग्रह के सामने साष्टांग प्रणाम करने के पश्चात् सभी महिलाएँ तुलसी-मंच के पास, जहाँ दीप जलाया जाता था, वहाँ आकर बैठतीं। अत्यन्त सौभाग्यवती वह होती, जिसे माँ के सान्ध्य ध्यान में उनके पास बैठने का अवसर प्राप्त होता।

शिष्यों के प्रश्न और श्रीमाँ के उत्तर

स्वामी शान्तानन्द जी ने एक बार श्रीमाँ से पूछा – ''अनुराग नहीं होने से केवल नाम-जप करने से क्या होगा?''

श्रीमाँ ने उत्तर दिया – ''पानी में चाहे स्वेच्छा से उतरो या कोई तुम्हें धक्का देकर उसमें गिरा दे, तुम्हारे कपड़े तो भीगेंगे ही। रोज ध्यान करना, मन अभी कच्चा है न? ध्यान करते-करते मन स्थिर हो जाएगा। सर्वदा विचार करना। जिस वस्तु के पीछे मन दौड़ता है, उसे अनित्य समझकर मन को भगवान के प्रति समर्पित करना। एक व्यक्ति मछली पकड़ रहा था। उसके पास से बाजे-गाजे के साथ बारात निकली पर उसकी दृष्टि बंसी की डोरी में बंधे टुकड़े पर ही केन्द्रित थी। इसलिए उसे बारात के गुजर जाने का पता ही नहीं चला। साधक का मन उसी प्रकार दृढ़ निश्चयवाला होना चाहिए।''...

शिष्य – जप तो करता हूँ, परन्तु मेरा मन एकाग्र नहीं होता।

श्रीमाँ – मन लगे, न लगे, जप करते रहना। यदि तुम प्रतिदिन निर्धारित संख्या के अनुसार जप कर सको, तो अच्छा होगा।

शिष्य – माँ, क्या गिनकर जप करना चाहिए?

श्रीमाँ – गिनते हुए जप करने से गिनती की ओर दृष्टि रहती है, ऐसे ही जप करना।

शिष्य – जब हम जप करते हैं, तब हमारा मन भगवान में तल्लीन क्यों नहीं होता?

श्रीमाँ – अभ्यास करते-करते यथासमय होगा। यदि मन एकाग्र न भी हो, तो भी जप करना नहीं छोड़ना। तुम अपना काम करते रहना। नाम जप करते-करते मन अपने आप ही उसी प्रकार स्थिर हो जाएगा, जैसे पवन से सुरक्षित स्थान पर जलती दीपशिखा स्थिर रहती है। पवन रहने पर दीपशिखा की लौ झिलमिलाती रहती है, उसी प्रकार मन में यदि कामनायें-वासनायें रहें, तो वह स्थिर नहीं होता।

एक भक्त ने शिकायत की कि जप-ध्यान करने के बाद भी उसके मन का अपवित्र भाव नहीं जा रहा है?

श्रीमाँ ने कहा – जप के अभ्यास से चला जाएगा।

नलिन बिहारी सरकार बताते हैं – ध्यान जप की बात उठाने पर श्रीमाँ ने कहा – ''जप-ध्यान का एक नियमित समय रखना बहुत आवश्यक है। क्योंकि कब अनुकूल क्षण आयेगा, कहा नहीं जा सकता। अचानक वह समय कब उपस्थित होगा, भनक भी नहीं लगेगी। इसलिए कितनी भी झंझट क्यों न हो, नियम-पालन करना बहुत जरूरी है।''

नलिन बिहारी – काम का झंझट या बीमारी आदि सब लगी रहती है, इसलिए सब समय नियम का पालन करना सम्भव नहीं होता।

श्रीमाँ – अस्वस्थ होने पर तो कोई उपाय नहीं है और बहुत अधिक यदि काम का झंझट हो, तो स्मरण करके प्रणाम करने से ही हो जाता है।

नलिन बिहारी – किस समय जप-ध्यान करना चाहिए?

श्रीमाँ – सन्धि-क्षण में ही उनको पुकारना उत्तम है। रात ढल रही है, दिन निकल रहा है अथवा दिन बीत रहा है, रात आ रही है – यही हुआ सन्धि-क्षण। इस समय मन पवित्र रहता है। मन की दुर्बलता के सम्बन्ध में पूछने पर माँ ने कहा – 'बेटा, यह प्रकृति का नियम है, जैसे अमावस्या, पूर्णिमा है न? वैसे ही मन कभी अच्छा, तो कभी बुरा रहता है।

एक दिन बातचीत में शिष्य ने कहा – 'माँ संसार में रहकर कोई काम नहीं होता।

श्रीमाँ ने कहा – 'बेटा, संसार महा दलदल है, दलदल में फँसने से निकलना कठिन है। ब्रह्मा, विष्णु संकट में जाते हैं, फिर मनुष्य की क्या बिसात है। उनका नाम लेना। नाम लेते-लेते वे ही एक दिन बन्धन काट देंगे। उनके बिना काटे क्या कोई उपाय है बेटा? उनमें खूब विश्वास रखना। संसार में जैसे माँ-बाप बच्चों के आश्रयस्थल हैं, वैसे ही ठाकुर को समझना।

शेष भाग पृष्ठ ५६८ पर

सारगाछी की स्मृतियाँ (१२२)

स्वामी सुहितानन्द

(स्वामी सुहितानन्द जी महाराज रामकृष्ण मठ-मिशन के उपाध्यक्ष हैं। महाराजजी जगजननी श्रीमाँ सारदा देवी के शिष्य स्वामी प्रेमेशानन्द जी महाराज के अनन्य निष्ठावान सेवक थे। उन्होंने समय-समय पर महाराजजी के साथ हुए वार्तालापों के कुछ अंश अपनी डायरी में गोपनीय ढंग से लिखकर रखा था, जो साधकों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। 'उद्बोधन' बँगला मासिक पत्रिका में यह मई-२०१२ से अनवरत प्रकाशित हो रहा है। पूज्य उपाध्यक्ष महाराज की अनुमति से इसका अनुवाद रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के स्वामी प्रपत्त्यानन्द और वाराणसी के रामकुमार गौड़ ने किया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' में क्रमश: प्रकाशित किया जा रहा है। – सं.)

हम अपनी डायरी में देखते हैं कि २९-०४-६४ के बाद २८-११-६४ को प्रविष्टि की गई है। सम्भवत: कोई विशेष कारण था, इसीलिए इन महिनों में कुछ नहीं लिखा गया। इतने समय बीतने के बाद स्मरण-शक्ति के बल पर कुछ विवरण लिखना लगभग असम्भव है।

रमानन्दजी को लिखित कुछ पत्रों के अंशों को देखने से ही पाठक यह समझ सकेंगे कि उस समय महाराज के शरीर के ऊपर से किस तरह का आँधी-तूफान गुजर रहा था।

प्रथम पत्र विजयादशमी को लिखित है और दूसरा पत्र ९-११-६४ को लिखा गया था। ५-१२-६४ को लिखा गया था – 'इस बार तो महाराज के शरीर के चले जाने की ही बात थी।'' २२-१२-६४ को सेवक ने लिखा – ''परसों से पूज्यपाद प्रेमेश महाराज अचानक पुन: अस्वस्थ हो गए हैं। आज उनकी स्थिति पहले से बेहतर है।''

श्रीरामकृष्ण:

वाराणसी

विजयादशमी

प्रिय विष्णु चैतन्य,

तुम शुभ विजया के सम्बन्ध में मेरा स्नेहालिंगन, प्रीति और शुभेच्छा जानना। तुम्हारे ७/१० और ८/१० के पत्र में तुम्हारा कार्य-विवरण पाकर मैं अतीव आशान्वित हूँ। श्रीठाकुर के चरणों में यही प्रार्थना निवेदित करता हूँ कि उनके श्रीचरणों की प्राप्ति न होने तक तुम उनके पथ से तिलभर भी विचलित न होओ।

मेरे शरीर की स्थिति प्राय: एक ही तरह की है। अपना कुशल समाचार देना। मेरा स्नेह-शुभेच्छा जानना।

इति

शुभाकांक्षी

प्रेमेशानन्द

श्रीरामकृष्ण:

वाराणसी

०९-११-६४

श्री चरणेषु,

विष्णु महाराज, आपका पत्र मुझे मिला। इस बार महाराज के ऊपर से एक बड़ा तूफान गुजर गया। बुखार, दाहिनी आँख में ग्लूकोमा, पेट में असहनीय पीड़ा, उल्टी, पेशाब में प्रचण्ड जलन एक के बाद एक करके इन अनेक कष्टों ने महाराज के शरीर को बिल्कुल निष्क्रिय और अवसन्न कर डाला है। एलोपैथी दवाओं के सेवन के दुष्प्रभाव से बचने हेतु होम्योपैथी चिकित्सा से कष्ट काफी कम हुए हैं। इस समय वही असाध्य खुजली रोग है।

आपका समाचार भी मिला। हमारे सौभाग्यवश ठीक इसी समय पवित्र दा (सेन) और ध्रुव दा के रहने से और छुट्टी बढ़ा लेने से हमें रात्रि-जागरण के लिए विशेष परेशान नहीं होना पड़ा।

पवित्र दा कल और ध्रुव दा १७ तारीख को प्रस्थान करेंगे।

इति विनीत

सनातन

२७-१२-६४

रात ८-३०-९.०० बजे का समय होगा।

विनय बाबू का परिवार विपन्न अवस्था में है, अतीव ऋणग्रस्त है।

महाराज – विनय के परिवार की स्थिति कौन जानता है ! मैं विनय से दो-चार बातें कर रहा था, तभी एक व्यक्ति आकर, सामने बैठकर कुछ बातें कहने लगा। उसके सामने कुछ कहने का उपाय नहीं था, सभी बातों में वह टाँग अड़ाएगा। फिर इस मोक्षदामोहन का बचपन से ही यही

स्वभाव है। एक बार उस अंचल में कुछ ब्राह्मण विद्वान आए थे, उनके साथ कुछ गम्भीर विषयों पर मैं चर्चा कर रहा था। तभी वह बड़े धीरे-धीरे आकर मेरे पास बैठ गया तथा बीच-बीच में कुछ बातें कहने लगा। मुझे बड़ी परेशानी का अनुभव हुआ। ब्राह्मणों का गाँव। किन्तु क्या करूँ ! एक साथ रहता था, मित्र जो था !

२८-१२-१९६४

सन्ध्या काल उद्‌बोधन से प्रकाशित शिवानन्द स्मृति और स्वामीजी के संग में पुस्तक का पाठ हुआ।

महाराज – ये सब लेख प्राय: सम्पादकीय लेख की तरह हैं। एक बार पढ़ने से बहुत अच्छा लगता है। खूब भाव जागता है और श्रीरामकृष्ण-वचनामृत की तरह आँखों के सामने सब दृश्य छा जाते हैं।

इस बार की लीला अद्‌भुत है ! ठाकुर-माँ-स्वामीजी तीनों ही अपूर्व हैं ! इन सब बातों की धारणा करने के लिए तपस्या करने की आवश्यकता है। अन्यथा कोई एक घटना अस्वाभाविक और गौरवशाली तथा ऐश्वर्यपूर्ण लगती है, किन्तु भीतर के सौन्दर्य, माधुर्य और जगत् के हित के लिए उस घटना का क्या अवदान है, यह सब समझ में नहीं आता।

मैंने सारा जीवन भाव को लेकर बिताया और अन्तिम काल में शायद काशी में मृत्यु हो। मैं अपने ऐसे स्वामीजी को नहीं देख पाऊँगा। मैं कहता हूँ, मैं मुक्ति-फुक्ति नहीं चाहता। स्वामीजी नंगे पाँव खोल बजाते हुए 'दुखिनी ब्राह्मणीर कोले' नामक गीत गाते-गाते जाएँगे और मैं उनका चेहरा, कण्ठ-स्वर और नृत्य देखूँगा। मैं जानता हूँ कि मुक्ति होने पर मैं नहीं रहूँगा। फिर भी मन में आता है कि इन्हें छोड़कर कहाँ जाऊँगा।

मैंने एक स्थान लिखा है – आनन्दमय कोश से भी वापसी हो सकती है। वह देखो, माँ भी लगभग ऐसी ही बात कहती हैं – गया में पिण्डदान करने से भगवान के समीप जाना होता है, किन्तु कोई-कोई लोग वासना और कर्मफल के अनुसार उनके पास से फिर जन्म लेते हैं।

३०-१२-१९६४

प्रश्न – अद्वैत आश्रम का प्रसाद अच्छा है कि सेवाश्रम का?

महाराज – पुराने संस्कारोंवश ठाकुर का प्रसाद मिलने से अद्वैत आश्रम का प्रसाद ही अच्छा प्रतीत होता है, किन्तु थोड़ा-सा विचार करने से ही देखता हूँ कि सेवाश्रम का प्रसाद ही अच्छा है। यहाँ नारायण-भाव से सेवा की जाती है। ठाकुर खाते हैं कि नहीं, यह समझ में नहीं आता, किन्तु यहाँ मनुष्यों में वे देदीप्यमान रहते हैं। इसके अलावा शास्त्र में भी कहा गया है –

'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।'

'अहं वैश्वानरो भूत्वा ...।'

०२-०१-१९६५

महाराज – जो हम लोगों के निकट आते-जाते हैं, वे निश्चय ही ठाकुर को चाहते हैं, क्योंकि यहाँ तो अन्य कोई स्वार्थ या उद्देश्य नहीं है। हमलोगों से तो केवल ठाकुर की बातों को ही कहते रहते हैं।

प्रश्न – सोचता हूँ, इसके बाद केवल ठाकुर की सेवा लेकर ही रहने का प्रयास करूँगा।

महाराज – इसके बाद भी कर्मयोग में विघ्न है। किसी एक कार्य-विशेष में आसक्ति है ! माँ ने कहा है – नहीं, जिनका नया-नया अनुराग है, उन्हें ठाकुर पूजा करने देना चाहिए। तुम्हारे लिए अध्यापन कार्य ही ठीक है। ठाकुर सेवा करते-करते धीरे-धीरे प्रसाद, पोशाक, मन्दिर, उत्सव, भक्त, प्रसाद देना, इन सबमें मतवाला होने से सर्वनाश हो जाता है। चारों योगों पर समान रूप से बल देते रहने से ठीक रहेगा। अध्यापन करते हुए बीच-बीच में ठाकुर की सेवा करने से ठीक रहेगा।

०३-०१-१९६५

प्रश्न – क्या कभी ऐसा हुआ है कि आपने सन्ध्या के समय बिना ध्यान-जप किए बिताया है?

महाराज – प्राय: ठीक तरह से ही हुआ है, शायद कभी किसी विशेष कारणवश नहीं हुआ हो।

श्रीरामकृष्ण-पूँथी का पाठ चल रहा है। उसमें वर्णन आता है कि राखाल महाराज रुष्ट होकर ठाकुर का सान्निध्य छोड़कर चले गए।

प्रश्न – राखाल महाराज ने ऐसा व्यवहार क्यों किया?

महाराज – राखाल महाराज ठाकुर को सोलहों आना (सम्पूर्ण रूप से) पाना चाहते थे। शायद वे ठाकुर को उस देह में आबद्ध नहीं देखते थे। बाद में वे ठाकुर के वास्तविक तत्त्व (स्वरूप) को जान गए। **(क्रमशः)**

गीता जयन्ती विशेष

जीवन का गीत है गीता

इन्दिरा मोहन

सम्पादक, 'सेवा समर्पण'

अर्जुन-कृष्ण का वह संवाद पाँच हजार वर्ष से भी अधिक प्राचीन हो चुका है, किन्तु आज भी उतना ही उपयोगी और कल्याणकारी है। व्यक्ति से लेकर समाज, राष्ट्र तक सारी समस्याओं का निदान गीता में है। सत्य-असत्य, कर्तव्य-अकर्तव्य, लौकिक-अलौकिक द्वंद्व से छुटकारा दिलाने की अद्‌भुत शक्ति है। आधुनिक भारत के कर्णधार राजा राम महोन राय, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गाँधी सभी ने गीता को अपने आचार-विचार का मानदण्ड बनाया। औरंगजेब का भाई दारा शिकोह तो इस ग्रंथ पर इतना मुग्ध था कि उसने फारसी में इसका रूपान्तर करके अपने बन्धु-बान्धवों में प्रचार किया। अनुवाद की वह मूल प्रति 'इंडिया ऑफिस' लंदन में आज भी सुरक्षित है। गाँधीजी कहते थे 'जब कभी मैं संशयों से घिर जाता हूँ, जब निराशायें मेरी ओर घूमने लगती हैं और मुझे प्रकाश की एक किरण भी नहीं दिखाई देती, तब मैं गीता का आश्रय लेता हूँ। इसका कोई न कोई श्लोक प्रेरणा देनेवाला मिल जाता है। तब मैं तत्काल शोक विभूत दशा में मुस्कराने लगता हूँ।''

वास्तव में गीता मानव जीवन के लिए कालजयी रचनात्मक कार्यक्रम है। यह महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित योगेश्वर कृष्ण की वंशी का वह गीत है, जिसकी गूँज मानव को उत्साह, आनन्द और कर्म की प्रेरणा से भर देती है। सत्य को सुन्दर बनाकर व्यवहार में लाना और जीवन भोगते हुए भी परम तत्त्व से दूर न जाना, यही गीता की विशेषता है।

गीता की चर्चा करने से पूर्व इस बात का निर्णय करना जरूरी है कि महाभारत युद्ध क्या था और क्यों लड़ा गया? महाभारत काल में व्यक्तिगत अहंकार और स्वार्थपरता चरमोत्कर्ष पर थी। भौतिक सुख-समृद्धि के कारण आध्यात्मिक भाव लुप्त हो गये थे। ऐसे विकट समय में श्रीकृष्ण ने देश-काल की मर्यादा सुरक्षित रखते हुए आधारभूत समन्वयवादी दृष्टि विकसित की और उसे अपने आचरण द्वारा क्रियात्मक रूप दिया। उन्होंने युधिष्ठिर को न केवल अपने साम्राज्य की प्राप्ति के लिए वरन् दुर्योधन द्वारा क्षोभित जनता के पक्ष में युद्ध करने का आदेश दिया। जो युद्ध स्वाधिकार की प्राप्ति के लिए केवल भाइयों का संग्राम हो सकता था, वह आर्य और अनार्य संस्कृति के उन पक्षों के निर्णय का युद्ध हो गया, जो कम से तीन हजार वर्ष तक भारतीय परम्पराओं का निर्णायक बना। उन्होंने समझाया कि दुष्ट को प्रसन्न करने की नीति न जनता का उपकार कर सकती है, न राष्ट्र और धर्म का। त्रेता युग में जो काम महर्षियों ने राम-रावण युद्ध के माध्यम से किया, वही द्वापर युग में पाण्डव-कौरव युद्ध के द्वारा प्रस्तुत किया गया।

इस प्रकार गीता की दृष्टि उस बिन्दु से शुरू होती है, जहाँ व्यक्ति-संघर्ष समष्टि-कल्याण से जुड़कर आदर्श-संघर्ष के रूप में बदल जाता है। शंका उठती है कि अर्जुन का प्रश्न व्यवहारसम्बन्धी था। कृष्ण कह देते, तू युद्ध कर। युद्ध भूमि में जब दोनों सेनायें आमने-सामने हों, इस दार्शनिक संवाद की क्या जरूरत थी? महामानव कृष्ण केवल अर्जुन को युद्ध में प्रवृत्त नहीं कराते, वे तो उस मोह को भंग करते हैं जो व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए सामाजिक मर्यादा को दाँव पर लगा देता है। अर्जुन '**नष्टो मोहःस्मृतिर्लब्धा**' कहकर उसी ओर संकेत करते हैं। अपने अधिकार को न छोड़ना एवं दूसरे के अधिकार पर अपना अधिकार न जमाना; दोनों ही मर्यादा की रीढ़ है।

कुरुक्षेत्र के मैदान में अपने सगे-सम्बधियों को देखकर अर्जुन शोकग्रस्त हो उठा। क्या स्वजन बान्धवों को मार कर राज्य-सुख भोगना मेरे लिए श्रेयस्कर है? सच पूछिये, तो कुरुक्षेत्र का युद्ध-स्थल प्रत्येक व्यक्ति का मन है, जहाँ हर पल सत्य-असत्य, शुभ-अशुभ, न्याय-अन्याय, कर्तव्य-अकर्तव्य के मध्य युद्ध छिड़ा रहता है। प्रतिकूल और अनुकूल भावों का द्वंद्व, विचारों को झकझोरता रहता है।

कर्मों के उद्देश्य को ठीक करना एवं उद्देश्य के अनुकूल कर्म करना, यह गीता का पहला सोपान है। कृष्ण एक ऐसे सहज जीवन के पक्षधर थे, जो न भोगों से परतन्त्र था और न पदार्थ-त्याग से। स्वयं उनके जीवन में, वृन्दावन में ग्वाले बने हुए और द्वारिका में स्वर्ण नगर की स्थापना करते हुए एक जैसी उदासीनता दिखाई देती है। राजसूय यज्ञ में सारे राजा उनका प्रथम पूजन करते हैं, जबकि वे उसी महायज्ञ में सबकी जूठी पत्तल उठाते हैं। हमारा सारा मोह तब शुरू होता है, जब परिस्थितियों को, उनके असली रूप में न देखकर, उनके साथ हम अपना रागात्मक सम्बन्ध जोड़ देते हैं, उससे दृष्टिकोण निरपेक्ष नहीं रह पाता और अनायास, भूल हो जाया करती है। तब हमारा संतुलन अर्जुन के समान बिगड़ जाता है। जाँच के सारे मापदण्ड बदल जाते हैं। गीता इसी असन्तोष को ठीक करने की शिक्षा देती है।

महाभारत युद्ध के आरम्भ में अर्जुन युद्ध करना नहीं चाहते। वे सोचते हैं कि स्वजनों और गुरुजनों की हत्या से महापाप लगेगा। इसके साथ ही उनके मन में कौरवों से हार जाने का डर भी है। हम भी ऐसा ही करते हैं, जहाँ हमारी आसक्ति होती है, वहाँ हम कमजोर हो जाते हैं और उस पर एक सुन्दर-सा आवरण डालने की कोशिश करते हैं। श्रीकृष्ण अर्जुन की इस कमजोरी को पकड़ लेते हैं। अपने तीखे वचनों द्वारा उसे जगाते हुये श्रीकृष्ण कहते हैं, 'प्रज्ञावादांश्च भाषसे' तू पंडितों जैसे वचन कहता है, कथनी में ज्ञानी बन रहा है, किन्तु व्यवहार में पंडितों-सा आचरण नहीं कर रहा है। हमारी समस्या भी यही है। हमारे मन और वाणी में, करने और कहने में भेद है। यह भेद ही द्वंद्वों और तनावों को पैदा करता है। इतना ही नहीं, लोग अपनी असफलता का दोष परिस्थितियों, परिचितों के सिर मढ़ दिया करते हैं, जबकि हम ही अपने उत्थान और पतन के कारण होते हैं।

जीवन प्रवाहमान नदी है, जिसके न पहले का भाग दिखाई देता है, न बाद का। अतएव वर्तमान जीवन के नाश से शोक कैसा?... जो नाशवान है, उनका नाश आज नहीं, तो कल होगा, पर आत्मा का किसी काल में नाश नहीं।

न जायते म्रियते वा कदाचि-
न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो
न हन्यते हन्यमाने शरीरे।। २/२०

हम केवल शरीर नहीं, अजर, अमर, अविनाशी आत्म तत्त्व हैं। शरीर की सोच कमजोरी को जन्म देती है। आत्मा का विचार अनन्त शक्ति का संचार करता है। जो शरीर को तुच्छ मानते हैं, वे ही त्याग कर सकते हैं। वे ही समाज और राष्ट्र के लिए जीवन न्यौछावर कर सकते हैं। शरीर को सर्वस्व माननेवाले कभी महान नहीं बनते। शरीर ही स्वार्थ का कारण है। वही हमें इन्द्रियों की सीमा में बाँधता है। इन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहंकार की संकीर्ण सीमा से निकल कर हम सत्य की ओर, आनन्द की ओर बढ़ सकते हैं। गीता कहती है, यह सम्पूर्ण विश्व ही तुम्हारा शरीर है। यह हवा जो बाहर चल रही है और जो हमारे भीतर साँस चल रही है, वह दोनों एक है। उसी प्रकार आकाश भी एक है। नाक, कान, मुँह, पेट आदि जहाँ भी खाली है, उसमें और आकाश में वस्तुतः कोई अन्तर नहीं है, तब तेरा-मेरा, अपना-पराया कैसा? यहाँ एकता के आधार पर समत्व बुद्धि, अहिंसा और प्रेम-भाव के साथ आचरण का विधान है, जिसमें सभी धर्मों, सम्प्रदायों का समावेश हो सकता है।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी।। १२/१३

हमारी समस्त क्रियाओं का अन्तिम फल सुख ही है। किन्तु अनुभव बताता है कि संसार में सुख जब भी आता है, दुख का मुकुट पहन कर आता है। सुख के साथ दुख झेलना ही पड़ता है। एक वस्तु एक समय के लिए सुखमय होती है तो दूसरे समय के लिए दुखमय, जैसे धूप गर्मी में दुख देती है, तो सर्दी में सुख देती है। इन्द्रियों द्वारा उपजे इस द्वंद्व के प्रति सतर्क रहने की जरूरत है। न तो इन्द्रियों में स्वयं विषय भोगने की योग्यता है और न विषयों में अपना निज का रस है। मन की अनुकूलता ही सुख-दुख का रूप दे, उन्हें अच्छा-बुरा बनाती है। सुख का संस्कार कभी न पूरी होनेवाली तृष्णा है, जो कामनाओं के रूप में निरन्तर प्रकट हो चित्त को अशान्त करती रहती है। हमारा वर्तमान समाज उसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। आज विज्ञान ने मनुष्य के चरणों पर जो शक्ति रख दी है, उससे बाह्य भौतिक जीवन तो पुष्ट हुआ, पर आन्तरिक विकास रुक गया। फलस्वरूप सारा जीवन इच्छाओं की बेचैनी और विचारों के कोलाहल से पूर्ण हो उठा। व्यक्ति समाज, राष्ट्र के सुख और संतोष को लेकर सर्वत्र टकराहट बढ़ रही है। तरह-तरह के नारे

सुनाई पड़ रहे हैं। सभी अपने को विकसित, शक्तिशाली दिखाने की होड़ कर रहे हैं, किसी को अपने अगले कदम का भरोसा नहीं है। सारी की सारी बौद्धिक संस्कृति डाँवाडोल है। आज जीवन जिन उपकरणों के बीच हाँपता-हाँपता-सा आगे बढ़ रहा है, उनके प्रति पुन: विचार करने की जरूरत है। बम के गोले जो गरज-गरजकर चारों ओर हिंसा बढ़ा रहे हैं, उनकी भी एक भाषा है, जिसे समझना जरूरी है।

सच पूछिये, तो दोष विज्ञान अथवा भौतिक साधनों का नहीं उस दृष्टिकोण का है, जिसकी अधीनता में आकर हम शरीर के सुख को अपना सर्वस्व मान बैठे। दोष उस विचारधारा का है, जिसने हमें अपनी आत्मा की भूमि से उखाड़ कर अलग कर दिया। उन मूल्यों को पुन: पकड़ने की जरूरत है, जिनका प्रतीक गीता है। धर्महीन, मूल्यहीन बुद्धि की आराधना का स्वाद हम ले चुके हैं। यदि कुछ देर और लगे रहे, तो सर्वनाश निश्चित है। हमें पशुभाव से ऊपर उठना है। पशु न तो अपने मन का नियंत्रण कर सकता है, न मन की क्रियाओं को समझ सकता है। वह तो बस अपनी सहज प्रवृत्तियों द्वारा चलायमान है। पर हमारा मन इतना विकसित है कि हम अपनी क्रियाओं को समझ सकते हैं, पकड़ सकते हैं और उन्हें देख सकते हैं। गीता कहती है, प्रवाह में बहना उचित नहीं। बहता तो तिनका है, लेकिन मनुष्य तैर सकता है। तैरने की शक्ति आत्मबल पर आधारित है। आत्मबल शारीरिक बल से हमेशा श्रेष्ठ है। इस सत्य को भारत जानता है, आज भी भूला नहीं है।

गीता सभी कर्मों को छोड़ कर जंगल में जाने का उपदेश नहीं देती। संसार में रहो, पर संसार हममें न रहे। नाव जल में रहे, यह तो ठीक, पर जल नाव में आते ही समझो नाव डूबी। बाहरी कारणों के परिवर्तन से शान्ति नहीं मिलती। परिवर्तन भीतर करना है, मन को बदलना है। हम जहाँ जायेंगे मन साथ जायेगा। यह परिवर्तन ज्ञान और कर्म के समन्वय द्वारा ही सम्भव है। यही गीता का कर्मयोग है। सुख-दुख, लाभ-हानि, जय-पराजय का विचार करता हुआ उनमें समान रहता है। न तो शुभ का स्वागत करता है, न अशुभ का तिरस्कार।

इस दशा के लिए हमें इन्द्रियों पर एक साथ नियन्त्रण करना होगा। एक के बाद एक नहीं। मन को सावधान रखना होगा। चंचल मन से कोई भी दायित्व पूरी तरह नहीं निभ सकता। अपने आचार-विचार दोनों को महत्त्व देना होगा, क्योंकि हमारी सार्थकता केवल जानने में नहीं, करने में है। जीवन में केवल आदर्श नहीं, आदर्शों को जीवन में आचरण करने का उत्साह चाहिए।

वास्तव में हम न धर्म समझते हैं न अधर्म, सुख जानते हैं, न दुख। यदि पूछें, सुख क्या है, तब हम धन, मकान, कार आदि भोगों का नाम ले लेते हैं। सुख चाहते तो सब हैं, परन्तु पहचानता कोई नहीं। दुख से परहेज है, दुख को भी पहचानते नहीं। इन्द्रियों की तृप्ति में फँसे हैं, अपने मन की दासता में लगे हैं। गीता कहती है, इन्द्रियों को संयमित कर इनको चलानेवाले सत्य को समझा जाये, तो मन की चंचलता, दुविधा और द्वंद्व मिट सकता है। कहीं आना जाना नहीं, कुछ करना-धरना नहीं। जहाँ हैं, वहीं पर पैर जमाने हैं। केवल स्वयं को जानना है। यही दृष्टि हमें संसार से अलग बना सकती है। अत: घड़ी की सुई की तरह चलते रहिये फँसिये नहीं, अटकिये नहीं। ○○○

(शाश्वत सन्देश, दिसम्बर-२०२० से साभार)

कविता

अम्बा मेरी सुधि लेना

आनन्द तिवारी पौराणिक

अम्बा ! मेरी सुधि लेना। अपने चरण-शरण देना।।
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह भव-बंधन।
षड्रिपु पाश ग्रसित जीव, जनम-जनम।।
कीट-पतंग सा जीवन हर बार।
अकारथ न हो जनम इस बार।।
जननी ! अब टेक यही, दया-दृष्टि करना।
अपने चरण-शरण देना।।
करुणामयी क्यों मैं तेरी करुणा से वंचित?
मन अशान्त, चिन्तित, चित्त भ्रमित।।
जग वैभव, पद, कीर्ति, पद, नाम बड़ाई।
क्षणभंगुर सुख, प्रपंच, अन्त दु:खदायी।।
करुण पुकार सुन मेरी माता, चिन्मय रूप दिखाना।।
अपने चरण-शरण देना।।

रामराज्य का स्वरूप (७/४)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार थे। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्‌घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज थे। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में १९८९ में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन स्वर्गीय श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द जी ने किया है। – सं.)

प्रत्येक वक्ता की बोलने की अपनी कला होती है, तो रामायण में सर्वश्रेष्ठ वक्ता दो हैं। या तो भगवान राम या श्रीभरत। गोस्वामीजी से किसी ने पूछ दिया कि दोनों के भाषणों की यदि तुलना की जाय, तो दोनों के भाषणों में क्या अन्तर है? पहले तो गुरु वशिष्ठ के भाषण की प्रशंसा की गोस्वामीजी ने। गुरु वशिष्ठ के भाषण की विशेषता यह है कि भाषण में वे तीन बातों का बड़ा ध्यान रखते हैं। तीन बातों को सम्हालकर बोलने की कला गुरु वशिष्ठ के भाषण में हैं।

समय समाज धरम अबिरोधा।

बोले तब रघुबंस पुरोधा। २/२९५/३

रघुवंश के पुरोधा जो गुरु वशिष्ठ हैं, वे समय, समाज और धर्म, इन तीनों का सामंजस्य करते बोलते हैं और भगवान राम के भाषण के लिए गोस्वामीजी ने कहा –

बोले बचन बिगत सब दूषन।

मृदु मंजुल जनु बाग बिभूषन।। २/४०/६

सारे दूषणों से रहित भगवान की वाणी है। क्या कहें, वे तो वक्ताओं में शिरोमणि हैं। उनकी वाणी शब्दों और अर्थों से परिपूर्ण है। ऐसी अद्‌भुत है कि उसकी जितनी प्रशंसा की जाये कम है। यदि उनसे पूछ दिया जाय कि श्रीभरत का भाषण कैसा है, तो श्रीभरत के भाषण के लिए गोस्वामीजी ने जो बात कही, वह भगवान राम के लिए भी नहीं कही। बड़ी विचित्र बात उन्होंने कही। क्या? बोले –

सुगम अगम मृदु मंजु कठोरे।

उन्होंने कहा – 'सुगम'। बड़े सरल भाषण देते हैं, भरतजी। पर उसके बाद उनका अगला शब्द क्या है? ठीक विरोधी शब्द। 'सुगम अगम' – अत्यन्त सरलता से समझ में आनेवाली और सरलता से समझ में न आनेवाली। फिर आगे? बोले – 'मृदु मंजुल' – बड़ा सुन्दर है। उसके तुरन्त बाद कहते हैं, बड़ा कठोर है। ऐसा विश्लेषण, बड़ा विचित्र प्रकार का विश्लेषण गोस्वामीजी ने किया।

महाराज, ऐसा कैसे सम्भव होगा? या तो मृदु होगा या कठोर होगा। सुगम होगा या अगम होगा। दोनों कैसे होगा? गोस्वामीजी ने कहा कि भाई भरतजी का भाषण सुनने में तो बड़ा सरल लगता है, पर उसके अन्तरंग अर्थ को समझ पाना सरल नहीं है। उन्होंने दृष्टान्त दिया कि श्रीभरत के शब्दों को पकड़ पाना सम्भव नहीं है। कैसे? जैसे अगर आप अपने कान को पकड़ना चाहें, तो कान को पकड़ना सरल है, लेकिन आप दर्पण के सामने खड़े हो जायँ, दर्पण में आप दिखाई दे रहे हैं, आपका कान भी दिखाई दे रहा है और आप दर्पण में दिखाई देनेवाले कान को पकड़ने की चेष्टा करें, तो क्या होगा? बड़ी विचित्र बात है, कान आपका है, आप देख रहे हैं, हाथ वहाँ तक ले जा रहे हैं, पर जब आप पकड़ने की चेष्टा करते हैं, तो पकड़ में कुछ नहीं आता। गोस्वामीजी ने कहा –

सुगम अगम मृदु मंजु कठोरे।

अरथु अमित अति आखर थोरे।। २/२९३/२

शब्द थोड़े से हैं, पर उसके अर्थों की कोई सीमा नहीं है। उनके शब्दों पर अगर विचार करें, तो इतने अर्थ हैं उनके शब्दों में कि प्रत्येक व्यक्ति को उनके भाषण में उनके शब्दों में अलग-अलग अर्थों की अनुभूति होती है और तब दृष्टान्त वही दर्पण का दिया –

ज्यों मुखु मुकुर मुकुरु निज पानी।

गहि न जाइ अस अद्‌भुत बानी।। २/२९३/३

जैसे आपके हाथ में दर्पण और दर्पण में आपकी मुखाकृति है, पर पकड़ में आना सम्भव दिखाई नहीं दे रहा है। अब अगर बहुत समय तक उनके भाषण का एक अलग प्रसंग लेकर व्याख्या करें, तो एक-एक वाक्य में आपको लगेगा कि कितने अर्थ उसमें समाए हुए हैं। पर गोस्वामीजी एक वाक्य जोड़ देते हैं। क्या? बोले, उत्तर तो उन्होंने उचित दिया और कितना मधुर बोलते हैं ! यहीं से प्रारम्भ किया, पहले तो उन्होंने हाथ जोड़कर सबको प्रणाम किया। यह विनम्रता की पराकाष्ठा है और पहला वाक्य ही उन्होंने यही कहा –

गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी।

सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।।२/१७६/३

गुरु, पिता, माता की वाणी को तो बिना विचार किए मान लेना चाहिए। अब जिसके भाषण का श्रीगणेश इस वाक्य से हो, अब आगे व्यक्ति क्या अर्थ लेगा? ऐसा भाषण तो आप लोग सुनने के अभ्यस्त होंगे। किसी व्यक्ति को जब पद-ग्रहण करना होता है, तो वह यही कहता है कि मैं पद तो नहीं लेना चाहता, पर बड़ों की आज्ञा नहीं टालनी चाहिए, इसलिए हम स्वीकार किए ले रहे हैं। तो लोगों के मस्तिष्क पर यही तो प्रभाव पड़ा कि भरत राज्य स्वीकार करने की भूमिका बाँध रहे हैं। वे कहना चाहते हैं कि मैं अयोध्या का राज्य तो स्वीकार नहीं करना चाहता था, पर जब गुरुदेव ने आज्ञा दे दिया, पिताजी की आज्ञा है, माँ की आज्ञा है, तो ऐसी स्थिति में मैं राज्य को स्वीकार कर लेता हूँ।

भूमिका तो प्रारम्भ हुई इस वाक्य से और आगे चलकर इसी बात का ऐसा खण्डन है, इतनी स्पष्ट अस्वीकृति है कि पढ़कर बड़ा विचित्र विरोधाभास लगता है। यह विषय वैसे अत्यन्त गम्भीर है। उसको उतनी गहराई में ले जाना उपयुक्त होगा कि नहीं होगा, यह थोड़ा मैं सोचने लग जाता हूँ। स्वामीजी को देखता हूँ, तो लगता है कि चलना ठीक है, पर सभी श्रोताओं को देखकर यह साहस नहीं होता। आप लोगों की बुद्धि पर मैं संदेह नहीं कर रहा हूँ, लेकिन फिर भी मैं यह समझता हूँ कि कुछ बातें जो शास्त्रीय विवाद की हैं, वे इस सन्दर्भ में जुड़ी हुई हैं। वह क्या है? संक्षेप में एक सूत्र के रूप में आपके सामने दे देंगे कि महत्त्व शब्द का है कि अर्थ का है? गुरु वशिष्ठ शब्दपरायण हैं और भरत अर्थपरायण हैं। हमारी शास्त्रीय परम्परा में दोनों पक्ष हैं। यह जो वैदिक परम्परा है, वह शब्द-प्रधान है और जो भक्ति परम्परा है, वह अर्थ-प्रधान है।

वैदिक परम्परा की मान्यता यह है कि शब्द अपने आप में परिपूर्ण है। इसलिए वैदिक मंत्रों के विषय में अर्थ विचारणीय नहीं है। यह मानते हैं कि वैदिक शब्दों का उच्चारण शब्दशः अगर ठीक-ठीक कर दिया जाय, तो उतने मात्र से ही संकल्प की सिद्धि हो जायेगी। इसलिए जो कुछ है, वह केवल शब्द ही है। इस विषय में बड़ा विस्तृत विश्लेषण किया गया है। शब्दों को बड़ा महत्त्व दिया गया है। आप लोगों ने सुना होगा कि आपके मन में भावना क्या है, इसका महत्त्व नहीं है वैदिक मन्त्रों में। आपका उच्चारण ठीक हो रहा है कि नहीं, महत्त्व इसको दिया गया है। बड़ा प्रसिद्ध दृष्टान्त श्रीमद्‌भागवत में आता है। त्वष्टा इन्द्र से रुष्ट हुए और रुष्ट होकर उन्होंने एक यज्ञ किया। उस यज्ञ में उनका संकल्प था कि ऐसा पुत्र प्राप्त हो, जो इन्द्र को मारे। पर उच्चारण में थोड़ी-सी त्रुटि हो गई – 'इन्द्रशत्रुर्वर्धस्व' मंत्र बोलने में उच्चारण का भेद हुआ, तो पुत्र तो उन्हें मिला, पर मन्त्र बदलने का कारण इन्द्र के द्वारा जो मारा जाय, वह पुत्र उन्हें मिला। इसका अभिप्राय है कि शुद्ध उच्चारण यदि आपका नहीं हुआ, तो अनर्थ हो सकता है। वह दृष्टान्त आपने सुना ही होगा कि एक पण्डितजी पाठ करने लगे कि 'भार्यारक्षतु भैरवी' के स्थान पर 'भार्याभक्षतु भैरवी' ऐसा पाठ करने लगे, तो पत्नी सचमुच मर गई। विचित्र-सी बात लगती है ! शब्द इतना सामर्थ्य युक्त है कि वह स्वयं सारी शक्तियों को उत्पन्न कर देता है। इस पर मन्त्रशास्त्र ने बड़ा बल दिया। मन्त्रशास्त्र में शब्द और उच्चारण को ही अत्यधिक महत्त्व दिया गया।

शब्द का अपने आप में बड़ा महत्त्व है। इसे दृष्टान्त के द्वारा ऐसे देखें। संगीत में आप देखते हैं। संगीत में शब्द का अधिक महत्त्व है या स्वर का? आप संगीत का परम्परागत गायन सुनते हैं। गायक जब गाता है, तो जब शब्द स्पष्ट होता है, तो उसे सुनकर उसका अर्थ समझ में आता है। पर ये गायक जो आलाप लेते हैं, उस आलाप का क्या अर्थ है? उस आलाप का हम अर्थ के द्वारा आनन्द नहीं लेते, उन स्वरों को सुनकर आप उसका आनन्द ले सकते हैं, आनन्द का अनुभव कर सकते हैं।

आलाप लेने में आप यह तो नहीं सोचते हैं कि इस आलाप का क्या अर्थ है? इसमें जो अक्षर उच्चारण किया जा रहा है, उस अक्षर का क्या अर्थ है, उसका क्या महत्त्व है? आप उस समय उस स्वर के दिव्य माधुर्य में डूब जाते हैं। स्वर और शब्द, इसे लेकर रामायण में कई प्रसंगों में चर्चा की गई है। रामायण के प्रारम्भ में जहाँ पर वन्दना की गई –

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।

मङ्गलानां च कर्त्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।। १/१/०

वर्णप्रधान और अर्थप्रधान, ये दो परम्परा है। यहाँ पर एक बड़े महत्त्व का प्रश्न है। वह अपने स्थान पर है। दृष्टान्त के रूपों में दोनों है। क्या? जैसे आप एक सत्य का अनुभव करते हैं पाठशाला में और एक सत्य का अनुभव करते हैं घर में। वे दोनों सत्य अपने-अपने स्थान पर महत्त्वपूर्ण हैं। आप विद्यालय में शिक्षा लेने के लिए जायें और व्याकरण की कक्षा में आप पढ़ने बैठें और शब्द का अशुद्ध उच्चारण करें या अशुद्ध लिख दें और आप कहें कि मेरी भावना तो शुद्ध लिखने की थी, इसलिए मुझे पास कर दिया जाना चाहिए। तो क्या आप आशा करते हैं कि कोई व्याकरण का परीक्षक आपको पास कर देगा कि आपकी भावना तो शुद्ध लिखने की थी, अब अशुद्ध लिख गया, तो कोई बात नहीं है, लीजिए मैं आपको पास किए देता हूँ। व्याकरणाचार्य की दृष्टि में तो शुद्ध उच्चारण और शुद्ध लिखने का महत्त्व है। आपने सही उच्चारण नहीं किया, सही नहीं लिखा तो आप अनुत्तीर्ण हैं। **(क्रमशः)**

पृष्ठ ५६० का शेष भाग

जयरामवाटी में श्रीमाँ के अन्तिम दिनों की साधना

श्रीमाँ के सेवक स्वामी ईशानानन्द जी (वरदा महाराज) कोलकाता जाने से पहले जयरामबाटी में श्रीमाँ के अन्तिम दिनों की बातें स्मरण करते हुए बताते हैं, उस समय श्रीमाँ का स्वास्थ्य पूर्णत: भग्न हो गया था। माँ क्रमश: दुर्बल होती जा रही थीं। इसलिए दुर्बलता के कारण श्रीमाँ अधिक समय तक बैठे हुए जप नहीं कर पाती थीं। फिर भी वह लेटे-लेटे ही जप किया करती थीं। प्राय: वह सारा समय ही जप करती रहती थीं। एक-एक दिन कभी यदि मध्यरात्रि में भी माँ को किसी कारण बुलाया जाता था, तो माँ तुरन्त ही उत्तर देती थीं। रात्रि के ११ बजे माँ शयन करती थीं। एक दिन वरदा महाराज ने श्रीमाँ से प्रश्न किया – ''माँ, क्या आप सोती नहीं हैं? नींद नहीं आती क्या?'' इस पर श्रीमाँ ने उत्तर दिया – 'क्या करूँ बेटा, लड़के सभी आकर व्याकुल होकर दीक्षा तो ले जाते हैं, परन्तु कोई-कोई नियमित जप नहीं करते। नियमित ही क्यों? कोई-कोई तो कुछ भी नहीं करते। इसलिए जप करती रहती हूँ और ठाकुर के पास उनलोगों के लिए प्रार्थना करती हूँ – 'ठाकुर उन्हें चैतन्य दो, मुक्ति दो, उनके इहकाल परकाल सब तुम्हीं देखना। इस संसार में भयंकर दुख कष्ट हैं।' ''

इतना सब कहते हुए श्रीमाँ उठकर बैठ जातीं और कहतीं – ''इतने आग्रह से मंत्र तो ले लिया, किन्तु, कुछ भी नहीं करते क्यों? क्या इतना कठिन है ! थोड़ा अभ्यास करने से ही कितना आनन्द मिलता है !''

भगवान का नाम लेने से एवं उनपर निर्भर रहने से ईश्वर मनुष्य को शक्ति प्रदान करते हैं। ईश्वर पर पूर्णरूप से निर्भरता से किसी प्रकार का कष्ट मनुष्य को विचलित नहीं कर पाता। तुलसीदास जी कहते हैं –

राम नाम मनिदीप धरू जीह देहरीं द्वार।

तुलसी भीतर बाहरेहुँ जौं चाहसि उजिआर।। १/२१/०

यदि तू भीतर और बाहर दोनों ओर प्रकाश चाहता है, तो मुखरूपी द्वार की जीभरूपी देहली पर राम-नाम रूपी मणि-दीपक को रख।

श्रीमाँ कहती हैं – ''कर्म का फल अनिवार्य है। पर भगवान के नाम के प्रभाव से उसकी तीव्रता को कम किया जा सकता है। यदि तुम्हारे भाग्य में पैर का कटना निश्चित है, तो कम से कम पैर में काँटा चुभकर रह जायेगा। जप तप के द्वारा कर्मफल को बहुत कुछ काटा जा सकता है। भगवान के पावन नाम कर्म के प्रभाव की तीव्रता को कम कर देता है।''

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रीमाँ स्वयं जप-साधिका थीं और दूसरों को जप करने के लिए प्रेरित करती थीं। ○○○

आये हैं तो जायेंगे राजा रंक फकीर

स्वामी सत्यरूपानन्द

पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर

हमारे मन में आसक्ति नहीं रहनी चाहिए। भजन भोजन से भी अधिक आवश्यक है। जैसे गुरुदेव ने बताया है, वैसे ही साधना करनी चाहिए। भोजन के समान भजन के लिए भी नियमितता रखनी है। जो लोग दृढ़ता से नियम बना लेते हैं, उनके मन में शान्ति आती है। यदि हमें कभी समय न मिले, तो दूसरे समय में अपना नियम कर लेना चाहिए। जैसे किसी भी दिन बिना भोजन के हम नहीं रह सकते, ठीक वैसे ही आध्यात्मिक साधना में भी ऐसा नियम कर लेना चाहिए। भगवान सारी व्यवस्था करते हैं। घोर संसारी लोगों के साथ हमारा मन भी संसारी बन जाता है। इसलिए घोर संसारियों का संग नहीं करना चाहिए। भगवान को छोड़ दूसरी बात नहीं करनी चाहिये। भगवान के नाम में रुचि आने से हमारा मन भगवान में ही रहेगा। भगवान से प्रार्थना करनी चाहिए कि भगवान सबका कल्याण करो। तुम्हारे सिवा मुझे कुछ नहीं चाहिए। संसार का काम करो, लेकिन सावधानी रखकर करो और भगवान को पुकारते रहो। मृत्यु का भय नहीं रखना है। अपने इष्ट से बात करनी है। उनसे प्रेम करना है, उनसे प्रार्थना करनी है और भगवान का भजन करना है और सुनना है। हमें सांसारिक चर्चा से बचना चाहिए। दूसरों के भोग की चर्चा कभी नहीं करनी चाहिए। दूसरों के भोग की चर्चा सुनने से हमारा ही मन खराब होता है। धीरे-धीरे हमारे मन को तैयार करना है। हम अकेले नहीं है। ठाकुर-माँ-स्वामीजी हमेशा हमारे साथ हैं। प्रयत्न करके अपने मनोभाव को अच्छा बनाकर रखना है। धीरे-धीरे संसार का आकर्षण कम हो जायेगा। अपना जो दायित्व है, उसे पूरा करना है, लेकिन मन भगवान की ओर ही रखना है। क्योंकि भगवान के बिना कुछ भी नहीं है और भगवान के भजन के बिना जीवन में शान्ति नहीं है। हमलोग ब्रह्मानन्दजी के भजन में गाते हैं न – 'हरि भजन बिना सुख नाही रे।' संसार में बाकी चीजें सब समाप्त हो जायेंगी, किन्तु रहेगा केवल भगवान का नाम।

संसार में जो माया दिखती है, वह अपने मन की चलाती है। हम उसमें रम जाते हैं, फँस जाते हैं और अपने मन को विचलित करते हैं। मन विचलित होने से दुख में फँस जाते हैं। दुख को कम करने के लिए एक भगवान का नाम ही सत्य है। भगवान हमारे साथ हैं और वे लीला करवा रहे हैं। हमारा मरण कब होगा, यह कोई नहीं जानता, लेकिन सतत यही सोचना कि आज ही हमारा अन्त होनेवाला है। ऐसा भाव रखने से हम सतत भगवान से ही संयुक्त रहेंगे।

सब समय प्रार्थना करनी चाहिए। प्रार्थना में बहुत शक्ति है। हम शरीर के विषय में बहुत सावधान रहते हैं, पर अपने मन को नहीं देखते। थोड़ा-सा विचार करके देखें कि शरीर का तो नाश होनेवाला है और मन हमारे साथ जायेगा। इसलिए सतत अपने मन की ओर ध्यान देना है। भगवान से प्रार्थन करनी है – हे प्रभो ! मेरा मन खराब है, इसे सुधार दो। भगवान सब कुछ जानते हैं। हमारा जीवन व्यर्थ नहीं होगा, ऐसा सोचकर रखना है। कलियुग में स्वामीजी हमारे रक्षक हैं।

ये संसार ठाकुर का है, तो कोई कैसे पराया हो सकता है? वे ही हमारे सब कुछ हैं और वे ही हम से सब कुछ करा रहे हैं। ठाकुर को जो करना है, वे तो करेंगे, पर अपनी ओर से बहुत प्रयास करना है। समुद्र में लहरें जैसे ऊपर-नीचे होती रहती हैं, वैसे ही जब तक श्वास चल रही है, तब तक हमें संघर्ष करते रहना है। इसलिए ऐसा सोचना है कि आज हमारा अन्तिम दिन है। एक बड़ी प्रसिद्ध कहावत है –

आये हैं तो जायेंगे राजा रंक फकीर।
एक सिंहासन चढ़ चले एक बँधे जंजीर।। ○○○

साधुओं के पावन प्रसंग (४८)

स्वामी परमेशानन्द

स्वामी चेतनानन्द

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज से रामकृष्ण संघ के भक्त भलीभाँति परिचित हैं। वर्तमान में महाराज वेदान्त सोसायटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द और वेदान्त पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनुवाद की हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रामकृष्ण संघ के महान त्यागी संन्यासियों के संस्मरण हैं, जिनके सम्पर्क में लेखक स्वयं आए थे। 'विवेक ज्योति' के पाठकों हेतु मूल बंगला से इसका हिन्दी अनुवाद धारावाहिक रूप से दिया जा रहा है। – सं.)

स्वामी परमेशानन्द (धरणी महाराज १९०४-१९८६) श्रीमाँ के शिष्य थे और शरत महाराज (स्वामी सारदानन्द जी महाराज) के दूर के रिश्तेदार थे। महाराज ने मुझे अपनी पुरानी स्मृति बतायी थी।

१८/०८/१९८२, अद्वैत आश्रम, वाराणसी

महाराज प्रतिदिन सन्ध्या समय सेवाश्रम के मैदान के चारों ओर कई बार घूमने के उपरान्त अतिथिशाला की सीढ़ी पर आकर बैठते थे। मैंने पूछा, ''महाराज, क्या आप प्रतिदिन घूमते है?'' महाराज ने कहा, ''हाँ, प्रतिदिन घूमता हूँ। देखो, अभ्यास छोड़ देने से उसे पुनः प्राप्त नहीं किया जाता।''

तदनन्तर उन्होंने प्रसंगवश कहा, ''किशोरी महाराज (स्वामी परमेश्वरानन्द) के संन्यास के लिए शिवरात्रि के अगले दिन श्रीमाँ ने एक पत्र देकर उनको बेलूड़ मठ में राजा महाराज के पास भेजा। बाबूराम महाराज ने पत्र का सारांश जानकर कहा, 'अरे ! तुम तो हाईकोर्ट का पत्र लेकर आये हो।' किशोरी महाराज ने उत्तर दिया, 'महाराज, मैं कुछ भी नहीं जानता। श्रीमाँ ने यह पत्र देकर मुझे भेज दिया।' संन्यास हो गया। श्रीमाँ ने बाद में कहा था, 'बेटा, तुम्हारा मृत्यु-योग था। संन्यास लेने से नया जन्म हुआ। इसीलिए तुमको संन्यास लेने के लिए कहा, जिससे तुम्हारा मृत्यु-योग कट जाये।' किशोरी महाराज ने स्वयं ही मुझे यह घटना बतायी थी।

''श्रीमाँ कहती थीं, 'बेटा, जन्म-मृत्यु-विवाह, ये तीन ईश्वर के अधीन हैं।' एक शिष्य का तीन विवाह-योग था। ठाकुर ने उसे नष्ट कर दिया। ठाकुर कृपा करके कर्मफल, प्रारब्ध काट देते हैं।

''जप-ध्यान ऊपर-ऊपर करने से नहीं होगा। सिद्ध-मन्त्र सुतली-पटाका जैसा होता है, जो भीतर का सब जला देता है और उसे बाहर निकाल देता है। बहुत दिनों से जप-ध्यान कर रहा है, किन्तु अन्दर में इष्ट का दर्शन नहीं हो रहा है, इसका अर्थ (जप-ध्यान) ठीक नहीं हो रहा है। सोकर स्मरण-मनन हो सकता है, जप-ध्यान नहीं होता। तीव्र पुरुषार्थ का आश्रय लेकर प्रतिदिन बैठना होता है।

''विज्ञान महाराज ने स्वयं मुझे यह घटना बतायी थी : एक दिन ठाकुर ने विज्ञान महाराज के पास आकर कहा, 'पेशन, तुम इसके विषय में (श्रीमाँ) कुछ कहो। केवल मेरी ही बातें कहते हो। इनके विषय में नहीं कहने से लोगों की मुक्ति कैसे होगी? मुक्ति देने की स्वीमिनी तो वे हैं।' इसके उपरान्त विज्ञान महाराज ठाकुर और श्रीमाँ का मन्त्र देने लगे।''

२७/०८/१९८२, अद्वैत आश्रम, वाराणसी

महाराज ने कहा, ''नामी (इष्ट) का जितना चिन्तन किया जाता है, उतनी ही उनकी शक्ति अन्दर में आती है। देखना ठाकुर कितने प्रकार से तुमसे कार्य करायेंगे।

''महेन्द्रनाथ दत्त ने कहा था, 'स्वामीजी को बार-बार पढ़ना। यदि नहीं समझ सके, तो उसे बारम्बार पढ़ना। वह पढ़ना ही ध्यान है। देखना सब समझ में आ जायेगा।'

''प्रभु महाराज की एक शिष्या ने मन्त्र प्राप्त किया था। किन्तु मन्त्र को महाराज से अच्छी तरह नहीं सुन पाने के कारण वह मन्त्र का गलत जप करती थी। एक दिन स्वप्न में श्रीमाँ ने आकर उसका मन्त्र ठीक कर दिया। यह देखकर, एक ज्योतिर्मयी नारीमूर्ति कहती है, 'तुम मन्त्र को मुझसे कहो।' 'नहीं, मन्त्र को किसी को नहीं बताना चाहिए।' 'मुझे बता सकती हो।' तदुपरान्त श्रीमाँ ने स्वयं मन्त्र को सुनकर जोर से उच्चारण करके उसको सही मन्त्र बता दिया और शिष्या को भी बोलने को कहा।'' **(क्रमशः)**

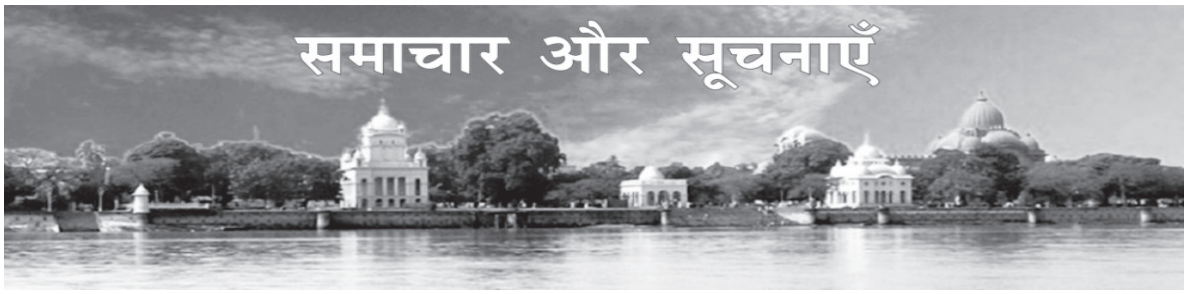

रामकृष्ण मिशन के विभिन्न केन्द्रों द्वारा ११ सितम्बर, २०२२ को विश्वभ्रातृत्व दिवस के रूप में विभिन्न कार्यक्रम आयोजित हुए

रामकृष्ण मठ, राजकोट ने 'स्वामी विवेकानन्द और आधुनिक युवा' विषय पर एक युवा-सम्मेलन का आयोजन किया, जिसमें ५५० युवकों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन आश्रम, चंडीगढ़ में भक्त सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसमें १४० भक्तों सम्मिलित हुये।

रामकृष्ण मठ, चेन्नई में सार्वजनिक सभा का आयोजन हुआ, जिसमें ५०० लोग उपस्थित थे। तेलंगाना और पांडिचेरी की राज्यपाल श्रीमती तमिलिसाई सौन्दरराजन मुख्य अतिथि थीं। स्वामी गौतमानन्द जी महाराज ने सभा की अध्यक्षता की। इस अवसर पर एक तमिल पुस्तक का भी प्रकाशन किया गया। उसी दिन विवेकानन्द ईल्लम में एक कार्यक्रम हुआ, जिसमें २५० छात्रों ने भाग लिया। निबन्ध प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार भी प्रदान किया गया, जिसमे २६ संस्थानों के ५००० छात्रों ने भाग लिया था।

रामकृष्ण मठ, हैदराबाद में सार्वजनिक सभा और संगीत-**प्रवचन** का आयोजन हुआ, जिसमें ७५० लोगों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, मुजफ्फरपुर में शिक्षक-सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसमें स्कूल-कालेज के ६० शिक्षक और प्रधानाध्यापक और प्राचार्यों ने भाग लिया। जिला मजिस्ट्रेट और अन्यों ने सभा को सम्बोधित किया।

रामकृष्ण मठ, लखनऊ में भक्तसम्मेलन और सर्वधर्म सभा का आयोजन हुआ।

रामकृष्ण मिशन, नवद्वीप द्वारा आयोजित कार्यक्रम में ३५ युवा और अन्य लोग उपस्थित थे।

रामकृष्ण मिशन, नरोत्तमनगर में भाषण, पाठावृत्ति, चित्रकला और प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन हुआ।

रामकृष्ण मिशन, जम्मू में १५ सितम्बर को युवा शिविर का आयोजन हुआ, जिसमें स्कूल-कालेज के २०० छात्रों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन, श्रीनगर ने अनन्तनाग जिले में एक जनसभागार में सांस्कृतिक प्रतियोगिता आयोजित की, जिसमें ८० छात्रों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन, पुरुलिया में १३ सितम्बर को छात्र-सम्मेलन आयोजित हुआ।

रामकृष्ण मिशन, तंजौर में १० से १४ सितम्बर तक तंजौर, त्रिचि, पेराम्बुर और कुम्भकोणम् के सात कालेजों और विश्वविद्यालय में विशेष व्याख्यान किये गये, जिसमें ४५०० छात्र सम्मिलित हुए। आकाशवाणी त्रिचि द्वारा एक घंटे की वार्ता भी प्रसारित की गई।

विवेकानन्द विद्यापीठ, कोटा, रायपुर में ११ सितम्बर, २०२२ को विश्व भ्रातृत्व दिवस मनाया गया, जिसमें श्रीमती ललिता धाड़ीवाल, डॉ.के.आर.के.सुखदेव, डॉ. बशीर हसन, पास्टर सेमुअल पाल, डॉ. ओमप्रकाश वर्मा और स्वामी कृष्णामृतानन्द जी ने विभिन्न धर्मों पर व्याख्यान दिये। सभा की अध्यक्षता स्वामी व्याप्तानन्द जी महाराज ने किया।

राजकोट आश्रम

वार्षिक अनुक्रमणिका
'विवेक-ज्योति' में वर्ष २०२२ ई. में प्रकाशित
लेखकों तथा उनकी रचनाओं की सूची

अखण्डानन्द स्वामी – मेरे जीवन की कुछ स्मृतियाँ (३७)

आत्मानन्द स्वामी – गीता तत्त्व चिन्तन **(दशम अध्याय)** (७) ३५, (८) ८५ **(ग्यारहवाँ अध्याय)** – (१) १३७, (२) १८४, (३) २३०, (४) २७९, (५) ३२८, (६) ३७२, (७) ४०३, (८) ४६९, (९) ५१२, (१०) ५५५,

आत्मस्थानन्द स्वामी – श्रीरामकृष्ण का मानवतावाद १२४, विश्व धर्ममहासभा में स्वामी विवेकानन्द की सहभागिता का प्रभाव ३९७,

अद्‌भुतानन्द स्वामी – साधना का फल तो तुम्हें मिल रहा है ८०,

अनिलयानन्द स्वामी – ईहा दीक्षित (बच्चों का आँगन) २५९, मैं आपको संस्कृत में पत्र लिखता था (युवा प्रांगण) ४५९,

अलोकानन्द स्वामी – या देवि सर्वभूतेषु ... ४४८,

अलिप्तानन्द स्वामी – श्रीमाँ सारदा का प्रबन्धन ५४६,

उपाध्याय, पं. रामकिंकर – रामराज्य का स्वरूप (४/४) २९, (५/१) ७३, (५/२) ११८, (५/३) १६८, (६/१) २१२, (६/२) २७१, (६/३) ३१८, (६/४) ३६८, (७/१) ४०८, (७/२) ४६६, (७/३) ५१४, (७/४) ५६६

उपाध्याय राजकुमार 'मणि' – भारतीय संस्कृति का शाश्वत प्रवाह १७५,

कश्यप राजेश – होली के विविध रंग ११४,

गुप्ता सीताराम – न्यायार्थ परिवार, पार्टी का विरोध भी स्वीकार करें १२१ (युवा प्रांगण), अन्तर्मन की बात सुनें २१६ (युवा प्रांगण), करुणा का विस्तार कर सार्थक मनुष्य बनें ३११ (युवा प्रांगण), प्रसन्नता बाँटो, प्रसन्नता पाओ ४०६ (युवा प्रांगण),

गुप्ता आशा – वास्तविक सहायता (युवा प्रागंण) ३२

गुणदानन्द स्वामी – आपसे बड़ा बलिदानी पुरुष क्या कोई हो सकता है? (बच्चों का आँगन) १७, जीवन की सफलता में दिव्यांगता बाधक नहीं : उम्मुल खेर (युवा प्रांगण) ७६, पुत्र को शूरवीर बनाने वाली माँ : जयवन्ता बाई (बच्चों का आँगन) ११६, गलतियाँ नहीं होंगी, तो विद्यार्थी अध्ययन कैसे करेंगे (बच्चों का आँगन) १७३, मैं अपना सम्पूर्ण जीवन राष्ट्रसेवा में समर्पित करूँगा २११ (बच्चों का आँगन), युवाशक्ति चुनौतियों का सामना कैसे करे? (युवा प्रांगण) २७४, विजय या वीरगति का प्रण ३०४, यह मेरी पवित्र मातृभूमि है ३५२ (बच्चों का आँगन), वीर-बालक : छत्रसाल ४०० (बच्चों का आँगन), कर्नाटक का भगीरथ : विश्वेश्वरय्या (बच्चों का आँगन) ४५६, हे युवको ! अपना विकास स्वयं करो (युवा प्रांगण) ५०५, आत्मविश्वास से आत्मविकास की ओर (युवा प्रांगण) ५५२,

गुरुप्रसाद – रहीम की रक्षा ३२१,

गौड़ रामकुमार – (भजन एवं कविता) विवेकानन्द की शिक्षा ३९९, विवेकानन्द वन्दना ५११, हे सारदा माँ ! भक्ति दो ५५१,

घोष रीता – देश के लिए सुहागन क्रान्तिकारिणी ननीबाला देवी ३५७, जप साधिका माँ सारदा ५५८,

चन्द्रवंशी लखेश – स्वामी विवेकानन्द के राष्ट्र-ध्यान से अनुप्राणित काव्यधारा २५,

चेतनानन्द स्वामी – साधुओं के पावन प्रसंग (३७) ४३, (३८) ९१, (३९) १४०, (४०) १८८, (४१) २३४, (४२) २८२, (४३) ३३१, (४४) ३८१, (४५) ४२६, (४६) ४७४, (४७) ५१७, (४८) ५७०,

चौबे उत्कर्ष – पात्र की अनुकूलता ३१४,

चूड़िवाल अरुण – क्रान्तिकारी चिन्तन की देवियाँ १२९, शक्तिपीठेश्वरी सती १६३, स्वाधीनता आन्दोलन की क्रान्ति ज्वालाएँ ३०८, स्वतन्त्रता संग्राम के बलिदानी ३४५,

जोशी मीनल – धन्य है कचरू ! धन्य है उसकी देशभक्ति ! १८० (युवा प्रांगण), भारतीय और पाश्चात्य मनीषियों की दृष्टि में मन का स्वरूप ४२२,

झुनझुनवाला लक्ष्मीनिवास – शिकागो विश्व धर्म-सम्मेलन में पाश्चात्यों द्वारा भारतवर्ष का गौरवगान ४०१,

तन्निष्ठानन्द स्वामी – कन्याकुमारी के शिलाखण्ड पर स्वामी विवेकानन्द १८, भगवान श्रीजगन्नाथपुरी की रथयात्रा २४८, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द विश्वविद्यालय, हावड़ा २९६, ३६०,

तिवारी आनन्द 'पौराणिक'– जय सरस्वती माँ बुद्धिदायिनी ६४, मंगलमय हो नव-सम्वत्सर १७२, सृष्टि-दर्शन (भजन) २०६, प्रगति गीत ३६६, अम्बा मेरी सुधि लेना ५६५,

त्रिपाठी भानुदत्त 'मधुरेश' – कृपा करे उद्धार ४२४,

दुबे सविता – मेरी माँ धरती की माटी (कविता) ४२१

निखिलेश्वरानन्द स्वामी – प्रेम, करुणा, सहानुभूति और क्षमाशीलता की प्रतिमूर्ति : श्रीमाँ सारदा ९, स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी ४४१, ४८९

निर्विकल्पानन्द स्वामी – माँ सारदा ८

परमेश्वरन् पी. – श्रद्धा : भौतिक और आध्यात्मिक विकास की कुंजी ३२५,

पद्माक्षानन्द स्वामी – (बच्चों का आंगन) जंगल से पद्मश्री तक ६८,

पाण्डेय अजय कुमार – अहिंसा के चरणों में बन्दूक २२१,

पूर्णानन्द स्वामी – श्रीरामकृष्ण-गीता (७) ३१, ८ (६४) (९) ११७, (१०) १५९, (११) २१५, (१२) २८१, (१३) ३१३, (१४) ३८०, (१५) ४२१, (१६) ४५७, (१७) ४९६, (१८) ५४५,

प्रधान अवधेश – स्वातन्त्र्य योद्धा : सुभाषचन्द्र बोस ३७४,

प्रपत्त्यानन्द, स्वामी – (सम्पादकीय) भारत से प्रेम करो : स्वामी विवेकानन्द ७, पाप-मोचिनी मोक्षविधायिनी अमर माँ नर्मदा ५५, ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग व्याकुलता और भगवान श्री रामकृष्ण १०३, विश्व का एकमात्र कौशल्या मन्दिर : श्रीराम का ममियौरा १५१, भगवान बुद्ध की अहिंसा और उसकी व्यावहारिक उपयोगिता १९९, संयम के बिना सुख नहीं २४६, गुरुकृपा अपरम्पार २९४, आजादी का अमृत महोत्सव : आत्ममन्थन और समीक्षा ३४३, वर्तमान परिवेश में शिक्षक-प्रशिक्षण की प्रासंगिकता ३९१, लोक संस्कृति में शक्ति की आराधना ४३९, बच्चों को उपहार में सुसंस्कार दीजिए ४८७, करुणारूपिणी जय माँ ! ५३५

ब्रह्मेशानन्द स्वामी – वरिष्ठ साधुओं की स्मृतियाँ (६) १२, (७) ५९, (८) १०७,

भूतेशानन्द स्वामी – आध्यात्मिक जिज्ञासा (७३) ४०, (७४) ६५, (७५) १२६, (७६) १६०, (७७) २१९, (७८) २७६, (७९) ३०५, (८०) ३५३, (८१) ४१७, (८२) ४४६, (८३) ५०९ (८४) ५४३,

भिक्षु विशुद्ध पुत्र – डुबकी लगाओ ४६१, ४९८, ५३७

मनराल मोहन सिंह – उठो जागो दुर्बलता त्यागो (कविता) १६, तुम छाए चारों ओर ३९९, मैं तो अंश तुम्हारा ४५७, ईश्वर ही हैं जीवन के धन ४९६,

मालवीय सन्तोष (प्रेमी) – और पत्थर तैरने लगा ८४,

मोहन इन्दिरा – जीवन का गीत है गीता ५६३,

मौनी स्वामी रविपुरी जी – वैराग्यमय श्रीमद्भागवत ४१२,

रामतत्त्वानन्द स्वामी – (कविता) पूजा लीन्ह माँ सारदा ५५१,

रंजन राजीव (डॉ.) – अध्यात्म और मेरा चिकित्सकीय जीवन १३४,

रामनिवास (डॉ.) – जग में बैरी कोई नहीं ६९,

वर्मा ओमप्रकाश (डॉ.) – (कविता) वीर विवेकानन्द महान ११, माँ सरस्वति चिर कृपामयी ६४, जय महेश गौरीपति शंकर ११७, रामकृष्ण प्रभु हृदय विराजो १३६, विश्ववन्द्य श्रीरामकृष्ण जय २७८, गुरु से बड़ा नहीं है कोई ३१७, कृष्ण प्रभु तुम वंशीधर हो ३६६, जयतु विवेकानन्द विश्वगुरु ३९९, जयतु जयतु जय दुर्गे माता ४४५, अनन्तरूपिणि हैं माँ श्यामा ४५७, माँ काली का ध्यान करो ४९६, सारदा अम्ब तुम्हें प्रणाम ५५७,

वर्मा नम्रता – वीर सेनानियों की धरती : उत्तरप्रदेश ३५५,

विवेकानन्द स्वामी – विवेकानन्द के ज्वलन्त मंत्र ६, ५४, हनुमानजी को अपना आदर्श बनाओ १५०, मै बुद्ध के समान नैतिक लोग देखना चाहता हूँ : विवेकानन्द १९८,भारतीय स्वतन्त्रता के प्रति स्वामी विवेकानन्द का उद्घोष ३४२, शक्ति के बिना जगत् का उद्धार नहीं : विवेकानन्द ४३८, भारत का मेरुदण्ड केवल धर्म है ४८६, श्रीमाँ पर विचार ५३४,

लोहानी विनायक – स्वामी विवेकानन्द के अनुज भूपेन्द्रनाथ दत्त : एक देशभक्त, विद्वान और क्रान्तिकारी (१) १५३, (२) २०१, (३) २६२,

शर्मा सत्येन्दु डॉ. – शिवलिङ्गसूक्तम् ११३, श्रीसंकटमोचनस्तुतिः १७२, श्री हनुमन्निवेदनम् २०६, तब समझो शिवरात्रि सफल ३६६, कालीस्तवनम् ४४५,

श्रीशंकराचार्य – प्रश्नोपनिषद् (२०) ३३, (२१) ७९, (२२) १२३, (२३) १७४, (२४) २२८, (२५) २६०, (२६) ३१६, (२७) ३५६, (२८) ४११, (२९) ४५४, (३०) ५०८, (३१) ५४१,

श्रीधर कृष्ण – जब हृदय में मन्दिर बनने लगा १३६, अपने पुत्र की बलि देनेवाले शिवभक्त : सिरुतोंडर नयनार ३५०,

श्रीवास्तव विजय – प्रभु आइये ३१७,

सत्यरूपानन्द, स्वामी – सुख सुविधाओं में नहीं, भगवान के नाम में है ३९, लक्ष्य अवश्य मिलेगा ९०, भगवान ने यह संसार ईश्वर प्राप्ति हेतु दिया है १३३, ईश्वर के चरणों में ही स्थायी सुख है १८७, संसार नहीं, स्वयं को बदलो २०७, सब दुखों की औषधि : जप और प्रार्थना २६१, गुरु द्वारा प्रदत्त मंत्र ही सर्वश्रेष्ठ मंत्र है ३३०, सहनं सर्वदुःखानाम् ३६७, श्रेय और प्रेय ३९३, भगवान का नाम व्यर्थ नहीं जाता ४५८, अध्यात्म जीवन में परम आवश्यक : ईश्वर स्मरण ५२१, आये हैं तो जायेंगे राजा रंग फकीर ५६९,

सुहितानन्द स्वामी – सारगाछी की स्मृतियाँ (१११) २३, (११२) ८१, (११३) १३१, (११४) १८२, (११५) २२६, (११६) २६९, (११७) ३२२, (११८) ३७८, (११९) ३९५, (१२०) ४७२, (१२१) ४९४, (१२२) ५६१,

सिंह ज्योति – हम सबके बुद्ध २०८,

सिंह मिताली – मुश्किल समय में हिम्मत न हारो (बच्चों का आँगन) ४९७, विलक्षण प्रतिभा (बच्चों का आंगन) ५५०,

सिंह जया (डॉ.) – सत्यं शिवं सुन्दरं की अभिव्यक्ति : माँ सरस्वती ५७, भगवान शिव का व्यक्तित्व १०५, स्वतन्त्रता संग्राम में छत्तीसगढ़ की मिट्टी के सपूत ३७०,

सिन्हा सदाराम 'स्नेही' – (भजन) कृपालु हरि २०६, द्वारकानाथ (कविता) २७८,

अन्य संकलन

श्रीमाँ सारदा देवी के पत्र – ५४५

पुरखों की थाती (संस्कृत सुभाषित) – ५, ५३, १०१, १४९, १९७, २४५, २९३, ३४१, ३८९, ४३७, ४८५, ५३३,

लेख एवं प्रसंग – प्राच्य-पाश्चात्य मनीषियों की दृष्टि में भारत ३४, सदैव ईश-भाव ८९, श्रीरामकृष्ण की दिव्यवाणी १०२, गीता पढ़ने का अधिकारी १६२, भगवान बुद्ध के उपदेश २२९, शिकागो धर्म-महासभा में स्वामीजी के विचार ३९०, तुम्हें बहुत कार्य करना होगा : श्रीरामकृष्ण देव ५३४,

स्तोत्र-भजनादि संकलन – विवेकानन्द वन्दना ५, सरस्वती वन्दना ५३, श्रीरामकृष्ण-स्तुतिः १०१, ब्रह्मदेवकृतरामस्तुतिः १४९, श्रीबुद्धदेव वन्दना १९७, श्रीगंगा-स्तोत्रम् २४५, श्रीदक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् २९३, श्रीकृष्ण वन्दना ३४१, स्वामी विवेकानन्दजयगानम् ३८९, गौरी-स्तुति ४३७, श्रीजगद्धात्री-स्तोत्रम् ४८५, श्रीश्रीसारदा देवी स्तोत्रम् ५३३,

पुस्तक समीक्षा – तुलसी तत्त्व चिन्तन ५२२,

पुस्तकें प्राप्त हुईं – सचित्र महाभारत (पाँच खण्ड) २४, डॉ. हरिवंशराय ओबेराय की पुस्तकें २४, स्वामी विज्ञानानन्द - प्रत्यक्षदर्शियों के अनुभव ६७, स्वामी संवित सुबोधगिरि द्वारा रचित पुस्तकें ६७, श्री लक्ष्मीनिवास झुनझुनवाला की पुस्तकें ३२४, अद्वैत आश्रम की पुस्तकें ५११,

समाचार और सूचनाएँ – ४६, ९४, १४३, १९०, २३७, २८८, ३३४, ३८४, ४२९, ४७७, ५२४, ५७१,

वार्षिक अनुक्रमणिका (२०२२) – ५७२

पृष्ठ ५४४ का शेष भाग

सीमित हो गया है। सीमित होने का कारण पहले ही कहा हूँ – वैतनिक कर्मचारी बढ़ गये हैं और हमलोगों की उन्हें सँभालने में ही प्राण जाने की अवस्था हो जाती है। कार्य का विस्तार होने पर यह बढ़ेगा ही, कम नहीं होगा। एक निबन्ध में पढ़ा था – एक शैतान और एक भक्त एक साथ जा रहे हैं। भक्त कह रहा है – शैतान, तुम्हारा राज्य गया। शैतान कहा – क्यों? भक्त ने कहा – एक व्यक्ति को देखा कि विशुद्ध सत्य अकस्मात् मिल गया। इसलिए तुम्हारी अवस्था गई। शैतान ने सुनकर कहा – चिन्ता मत करो, उन लोगों को मैं संघबद्ध होने के लिये प्रलोभित करूँगा। अभी हमलोग संघबद्ध होने के लिये पानी में तैरते-उतराते हैं। (सभी हँसते हैं।)

– आपको क्या लगता है, हमलोगों को कार्य अब नहीं बढ़ाना चाहिए? कार्य बढ़ाना ही तो नया केन्द्र खोलना है।

महाराज – हमलोग हमेशा कहते हैं कि कार्य नहीं बढ़ायेंगे। किन्तु कार्य की गति-धारा ही ऐसी है कि वह सदा बढ़ती ही जाती है।

– अब तक देखा गया है, भारत के सभी प्रदेशों में हमारा केन्द्र नहीं हुआ है?

महाराज – नहीं, नहीं हुआ है।

– इस विषय में आप क्या सोचते हैं, क्यों नहीं हो रहा है?

महाराज – क्योंकि हमलोगों ने ऐसी योजना बनाकर कुछ नहीं किया है। अभी भी योजना बनाकर कुछ नहीं हो रहा है। केवल जहाँ भक्तों ने साग्रह निवेदन किया है, वहीं हमारा आश्रम स्थापित हुआ है। इसी प्रकार विस्तार हुआ है। ठीक भौगोलिक दृष्टि से विस्तार नहीं हुआ। अभी भी ऐसा ही है। किन्तु अन्य राज्यों के लोग भी चाहते हैं। अपनी क्षमतानुसार उन लोगों की सहायता कर कदाचित् हमलोग कहीं आश्रम स्थापित कर रहे हैं। कहीं नहीं कर पा रहे हैं। अभी भी यही स्थिति चल रही है। एक वाक्य में, हमलोगों ने कोई योजना बनाकर कार्य नहीं किया। **(क्रमशः)**

भूल सुधार

अगस्त और सितम्बर-२०२२ के अंक में साधुओं के पावन प्रसंग में स्वामी भास्करानन्द नाम के स्थान पर स्वामी भास्वरानन्द पढ़ें।